यदि इक बार 'हा' कहने में तेरे होठ हिल जायें।
तो सब आराम दुनिया के तुझे जीवन में मिल जायें॥

सीता—तो क्या आराम का लालच देकर मुझे सत-धर्म से गिराना चाहता है? सुखों का जाल फैला कर झूठी वासनाओं में फंसाना चाहता है? ओ अधर्मी :—

पाप करके लोक और परलोक में रुसवा न बन।
वासनाओं में अरे पापात्मा अन्धा न बन॥
राज-वैभव, भोग और सुख-सम्पदा को वार दूं।
धर्म के आगे तेरी लंका पै ठोकर मार दूं॥

रावण—अहंकार की प्रतिमा! धर्म की ठेकेदार! मैं फिर कहता हूं कि लंका के ऐश्वर्य पर लात न मार। नहीं तो मुझ शस्त्र उठाना पड़ेगा, जिस युक्ति को मैं अच्छा नहीं समझता उसे ही काम में लाना पड़ेगा :—

सिर झुका कर मान ले कहना मेरा, जिद्दी न बन।
काम ले बुद्धि से अभिमानी न बन, क्रोधी न बन॥
फल सी काया पै यह अन्याय, तू ढाती है क्यों?
राम के सन्ताप में घुल-घुल मरी जाती है क्यों?

सीता—बस-बस! ओ अधर्मी! रहने दे! मैं ऐसे उपदेश सुनना नहीं चाहती। जानकी को राम के अतिरिक्त संसार की कोई वस्तु नहीं सुहाती :—

राम ही जीवन है मेरे, राम ही आराम हैं।
सब के सब नारी हैं जग में पुरुष केवल राम है॥

रावण—सीते! तू बड़ी हठीली और अभिमान की पुतली है। ऐसी मूर्ख स्त्री मैंने ससार में आज तक नहीं देखी है :—

सीता—और तेरे जैसा अधर्मी तथा दुराचारी भी देखने में नहीं आया है :—

क्यों कुकर्मों पर कमर बांधे हुये तैयार है।
देख मुंह खोले हुए पापी नरक का द्वार है॥

गाना

रावण किसी का दबदबा जग में सदा रहा नहीं;
ऐसा खिला है गुल कहाँ ? धूल में जो मिला नहीं।
चंचल हो चाहे धीर हो, कायर हो, चाहे वीर हो,
आया जगत में कौन जो आके यहां से गया नहीं ?
जीवन के मौत साथ है, बीता जो दिन तो रात है,
बदली हैं रंगतें यहां नक्शा कोई जमा नहीं ?
पापी भी बन सितम भी ढा, चाहे जिसे जिला मिटा,
जब तक कि दुष्ट काल का, घंटा तेरा बजा नहीं।
बुझता हुआ दिया है तू, पानी का बुलबुला है तू ॥
मौत का खेल है कुशल कौन है जो मिटा नहीं ॥

रावण—बस बस ! ओ नादान ! ऐसे कठोर शब्द जबान पर न ला।
मेरे सोते हुए क्रोध को न जगा :

याद रख अब भी न सीधी राह पर जो आयगी।
तेरी हठधर्मी के कारण जान तेरी जायगी ॥

सीता—क्या कहा ? जान जायगी ? :—

एक दिन मरना है सब को मौत की चिन्ता ही क्या।
धर्म जो रह जाये तो फिर जान की परवा ही क्या ॥

रावण—अरी नादान ! देख !

धूम है लोकों अलोकों में मेरी तलवार की
गूंजती है विश्व में आवाज जय जय कार की॥
पल रहे हैं जल, पवन, यमराज रक्षा में मेरी,
देवता, दिगपाल, सब रहते हैं सेवा में मेरी ॥

सीता—तभी तो तू अन्धा बना हुआ है। अरे अभिमानी ! हृदय की आंख खोल कर तो देख कि संसार में कितने बड़े-बड़े बलवान हो बीते हैं, परन्तु आज न वे हैं न उनके बल बिरते हैं :—

मिलाये खाक ने सब को ही आखिर रंग में अपने।
जब आई मौत तो लेकर ही मानी संग में अपने॥

रावण—अच्छा ! तो तू अपनी हठ से बाज न आयगी। मेरी शक्ति के सामने सिर नहीं झुकायगी ?

सीता—आर्य ललनाएं शक्ति से नहीं धर्म से डरती हैं :—

यह कलेजा वह नहीं डर जाए जो करवाल से।
नारियां भारत की हर दम खेलती हैं काल से॥

रावण—(दांत पीस कर) हां-हां मैं तुझे अभी काल से खिलाता हूं। इस कोमल काया को पीस कर लंका की धूल में मिलाता हूं :—

मुद्दतों तक जो यहां की खाक छानी जायगी।
ढूंढने से भी न लँका में निशानी पायगी॥

[तलवार सूंत कर आगे बढ़ना, एक दूत का आना]

दूत—महाराज की जय हो ! द्वैतभू हाजिर होना चाहता है।

रावण—(रुककर) द्वैतभू ? हां-हां ठीक है। आने दो ! (सीता से) देख ! ओ हठीली नादान ! तूने अपनी हठ से क्या लाभ उठाया आखिर तेरे कारण आज राम भी युद्ध में काम आया।

सीता—हैं ? क्या कहा ? राम ?

रावण—हां-हां राम। तेरे और मेरे प्रेम में जो रोड़ा था उसे द्वैतभू ने हटा दिया, अर्थात आज के संग्राम में राम का सिर उड़ा दिया !

सीता—आह विधाता ! आज मैं क्या सुन रही हूं !

रावण—सुनना किसका ! ले देख ! अपनी आंखों से देख !

[द्वैतभू का राम का बनावटी सिर लेकर आना, सीता का देखकर घबराना]

सीता—आह भगवान ! :—

क्या रहा दुनियां में जब प्राणों का प्यारा चल दिया।
किस तरह जीवन हा जीवन का सहारा चल दिया॥

[मूछित होकर गिर पड़ना]

रावण—(त्रिजटा से) देखो त्रिजटा ! सीता बेहोश हो गइ है। जब यह होश में आये तो इसे अच्छी तरह समझाना और हमारे वैभव तथा राम का मृत्यु का विश्वास दिला कर अपने काबू में लाना।

त्रिजटा—जैसी आज्ञा महाराज !

[रावण का प्रस्थान]

त्रिजटा—(सीता के मुख पर जल छिड़क कर) सावधान ! बेटी सीता, सावधान ! संकट टल गया; तुम को सताने वाला रावण चला गया।

सीता—(होश में आकर) आह विधाता ! ये अन्यायी प्राण अब भी क्यों नहीं निकलते ! पापी काल अब भी क्यों नहीं आता !

सुख गया, वैभव गया, जीवन की इच्छा भी गई।
रह गया अब क्या मेरा, मिलने को आशा भी गई॥

[सिर पीटना]

त्रिजटा—सीता ! बावली क्यों हो रही है ? रावण के कपट में आकर वृथा ही प्राण खो रही है। भला भगवान को मारने वाला संसार में कौन है ?

सीता—मन तो मेरा भी यही कहता है माता जी ! परन्त सिर अवश्य राम का हो था !

त्रिजटा—हां दैत्यभू ऐसी ही वस्तुएं बना देता है कि बिल्कुल असली में मिला देता है। यह लंका का प्रसिद्ध कलाकार है और

बनावटी वस्तुएं बनाने में बड़ा होशियार है। तुम कोई चिन्ता न करो और ऐसी नीच मौत न मरो।

सीता—हां ! माता जी, अब मुझे तुम्हारे कहने पर विश्वास आ गया !

गाना

दरश दो स्वामी प्राणाधार !
संकट मोचन, कष्ट निवारण-भय भंजन भरतार !
दरश दो……
मन कलपावे, चैन न आवे-विरहिन को विरहा तड़पावे !
नैनों से बहती है स्वामी ! निस दिन जल की धार।
दरश दो……
रावण पापी दुष्ट कुकर्मी-दारुण दुख देता है अधर्मी,
केवल आशा चरण कमल की जीवन राखन हार।
दरश दो……

[परदा गिरना]

दृश्य दूसरा

(रावण का दरबार)

रावण—अहा हा ! लंका की शान भी क्या शान है :—

बन चुके हैं दास मेरे रंक से भूपाल तक,
जा गड़ी है नींव मेरे राज्य की पाताल तक।
सामने जो आगया फौरन मसल डाला गया,
सिर उठाया जिसने उस का सिर कुचल डाला गया।।

मन्त्री—यथार्थ है महाराज !:—

जिस तरफ देखो उधर लंकेश की सरकार है।
सारे भूमण्डल में गूंजी आज जय जयकार है।।

रावण—हमारा विश्वास है कि शक्ति-बाण अवश्य अपना काम करेगा और लक्ष्मण कायर की मौत करेगा। इसलिये पियो

पिलाओ, आनन्द मनाओ और कल लक्ष्मण की तरह राम को भी ठिकाने लगाओ :—

युद्ध भी चलता रहे आनन्द का दरबार भी।
रण के बाजे भी बजे पायल की हो झङ्कार भी॥

मन्त्री—जैसी आज्ञा महाराज ! (द्वारपाल से) द्वारपाल ! अभी जाओ और अप्सराओं को बुला कर लाओ !

द्वारपाल—जो आज्ञा महाराज ?

[अप्सराओं का आना, नाच होना]

रावण—साकी ! जल्दी लाओ :—

वह जाम पिला साकी मस्ताना बना डाले।
अपनी न खबर हो कुछ दीवाना बना डाले॥

मेघनाद—साकी :—

पीते ही बहक जाऊं अन्दाज वह करके ला।
मस्ती को दो आलम की इक जाम में भरके ला॥

सभासद—साकी ! इक नजर इधर भी :—

अप्सराओं का गाना

तेरे प्याले में ऐ साकी ! अजब मस्ती की दुनिया है।
कोई दीवाना बहका है कोई मदहोश बैठा है॥
किसी सरदार ने बोतल दबा रखी है पहलू में।
कोई प्याला उठाये हाथ में अपने को भूला है॥
गरेबां फाड़कर अपना किसी ने कर लिया दामन।
कोई पीने पिलाने के लिये साकी से उलझा है॥
किसी का है तकाजा साकिया भर-भर के लाये जा।
कोई पीकर उठा है और फिर पीने को बैठा है॥

रावण—वाह वाह ! संगीत भी क्या जादू है ?

दूत—(आकर) महाराज की जय हो ! लक्ष्मण की मूर्छा खुल गई। अब शत्रु फिर युद्ध की तैयारी कर रहे हैं।

रावण—क्या कहा ? मूर्छा खुल गई !

दूत—हां महाराज ?

रावण—अनर्थ हो गया ! बना बनाया सब काम बिगड़ गया।

मेघनाद—कुछ परवाह नहीं ! जिन भुजाओं ने उसे मूर्छित किया था, वे अब उसको सुरपुर पहुंचायेंगी।

रावण—नहीं ! पहले मुझे सोच लेने दो ! सब लोग जाओ और आराम करो !

[सब का जाना]

रावण—(स्वयं) ओह ! अफसोस !

गाना

मुकद्दर का पांसा पलटने लगा है।
जो बन बन के कारण बिगडने लगा है।।
जिसे हमने नाचीज समझा था दिल में।
वह नाचीज ही अब अकड़ने लगा है।।
हुआ लक्ष्मण का दोबारा जो जीवन।
मेरे दिल का साहस बिछड़ने लगा है।।
शगुन दे रहे हैं बुरे अब दिखाई।
कलेजा भी हर दम धड़कने लगा है।।
उधर गाये जाते हैं गाने कुशल के।
इधर साज गम का फड़कने लगा है।।

क्या मालूम था कि शक्ति भी निष्फल हो जायगी। आशाओं पर निराशा छा जायगी ! अब क्या करूं ? आये हुए संकट को कैसे टालू ! (सोच कर) बस-बस अब यही उचित है कि कुम्भकर्ण के शयन गृह में जाऊं और उसे जगा लाऊ। यदि वह युद्ध भूमि में चला जायगा तो काल के समान सब को खा जायगा !

[रावण का जाना, परदा गिरना]

दृश्य तीसरा

(कुम्भकर्ण का शयनगृह)

[कुम्भकर्ण सो रहा है, ढोल, बाजे आदि बज रहे हैं, कुम्भकर्ण जागता है।]

कुम्भकर्ण—हैं ! वह पापी कौन है जिसने मुझे कच्ची नींद जगाया है !

रावण—(नम्र भाव से) हे भाई ! मुझ पर महान संकट आया है, इसलिये मैंने ही तुम्हें जगाया है।

कुम्भकर्ण—कौन ? रावण ! कहो भाई, ऐसी क्या आपत्ति आई जिसने तुम्हारी मुद्रा इतनी मलीन बनाई।

रावण—कुछ न पूछो भाई ! आजकल मैं संकट में हूं। अयोध्या के दो राजकुमारों ने बहिन स्वरूपनखा की नाक काट कर घोर अनर्थ कर डाला और जब खर दूषण अपना बदला लेने गये तो उनको भी मार डाला।

कुम्भकर्ण—क्या खर दूषण मारे गये ?

रावण—खर दूषण ही नहीं लंका के अनेक वीर मारे जा चुके हैं ! दुर्मुख, महोदर, अक्षय आदि सब मौत के घाट उतारे जा चुके हैं !

कुम्भकर्ण—ओह ! बड़ा आश्चर्य है ! अच्छा तुमने फिर क्या किया?

रावण—जब उन लोगों ने अधिक ऊधम मचाया तो मैं भी राम की स्त्री जानकी को चुरा लाया।

कुम्भकर्ण—अरे भाई ! यह तुमने बुरा किया, नीति पर कुछ भी ध्यान न दिया। जिसे तुम जानकी कहते हो वह जगत की जननी 'जगदम्बा' है, निशाचरों का नाश करने वाली साक्षात् कालिका है और फिर स्त्री का चुराना अन्याय है—घोर पाप है।

रावण—तो क्या तुम इतने कायर हो गये कि अपने भाई के शत्रुओं की बड़ाई करने लगे !

कुम्भकर्ण—बड़ाई नहीं, सच्ची बात कहता हूं। नारद जी ने मुझे उपदेश दिया था कि बुद्धि मलीन होने के कारण जब रावण जानकी को चुरा कर लायगा तब राक्षसों के विनाश का समय आयगा।

रावण—मालूम होता है कि मांस और मदिरा न मिलने से तुम्हारी बुद्धि ठिकाने पर नहीं आई है जो तुम्हें ऐसी उलटी समाई है। (सेवकों से) देखते क्या हो ! मांस और मदिरा के पात्र उठा लाओ और कुम्भकर्ण को अच्छी तरह खिलाओ पिलाओ।

[नौकरों का कुम्भकर्ण को मांस खिलाना और मदिरा पिलाना, कुम्भकर्ण का मस्त होकर गरजना]

रावण—भाई ? तुम लंका के सबसे बड़े वीर हो। मुझे तुम्हारे बल पर बड़ा भरोसा है। अब सेना लेकर युद्ध में चले जाओ और अपने कुल-बैरियों का नाश करके तीनों लोकों में यश पाओ।

कुम्भकर्ण—अरे रावण ! तू क्यों घबराता है ? देख अब युद्ध में शत्रुओं का काल जाता है।

[कुम्भकर्ण का जाना, परदा गिरना]

दृश्य चौथा

(युद्ध भूमि)

राम—मेघनाद ! पापी मेघनाद ! उस दिन तू लक्ष्मण को शक्ति लगा कर चला गया परन्तु आज बचकर न जायगा, अपने अपराध का उचित दण्ड पायगा। आ ! ओ दुष्ट ! अब युद्ध में आ।

दूत—(आकर) महाराज की जय हो ! आज युद्ध के लिये मेघनाद

नहीं कुम्भकर्ण चला आ रहा है। वह देखिये बादल के समान घोर शब्द सुना रहा है।

राम—कोई चिन्ता नहीं ! आने दो ! उसे भी अपना पराक्रम दिखाने दो।

कुम्भकर्ण—आओ ! ओ मरने वालो अब जरा कुम्भकर्ण के सामने आओ ! इधर-उधर छिप कर अपने प्राण न बचाओ !

राम—(आगे बढ़ कर) बस खड़ा रह ? आगे कहाँ आता है !

कुम्भकर्ण—(हस कर) ओहो ! यह अवस्था और इतना साहस ! नन्हा सा बालक और कुम्भकर्ण से युद्ध ! वाह ! वाह :—

मच्छर उड़ा है चाद पकड़ने को देखना;
चींटी चली है शेर से लड़ने को देखना।

राम—अरे अभिमानी ! इतने अहंकार में क्यों आता है ? आगे बढ़ कर हाथ क्यों नहीं दिखाता है ?

कुम्भकर्ण—हाथ ! तुझे दिखाऊं हाथ !

बच्चों का खेल युद्ध को पामर समझ लिया।
क्या कुम्भकर्ण भी कोई कायर समझ लिया ॥

राम—कुम्भकर्ण, तू नहीं जानता कि साहसी पुरुष कहते नहीं करते हैं, बरसने वाले बादल बहुत ही कम गरजते हैं :—

कर्म से डरते हैं जो बातें बनाते हैं वही।
काम के कच्चे हैं जो जिह्वा चलाते हैं वही ॥
कर्म का करना कठिन कहना जिन्हें आसान है,
कायरो की विश्व में केवल यही पहचान है।

कुम्भकर्ण—अच्छा तो आगे को क्यों नहीं आता है ! क्या बचकर भाग जाने के लिये दाव घात लगाता है ? याद रख :—

मैं नहीं बच्चा जिसे बातों से तू बहकायेगा;
बात कितनी भी बना लेकिन न बचने पायेगा।
आज रणचंडी भयकर रूप धर कर आयेगी ?
मैं चलूंगा जिस तरफ जय साथ होती जायेगी।

राम—जय पाप की नहीं धर्म की होती है। पापी की विजय निराशा के अन्धकार में सोती है।

कर्म से जय और पराजय है सदा इन्सान की;
कर्म से ही प्राप्ति है मान और अपमान की।
कर्म जब अच्छे नहीं तो जीत फिर होगी कहां?
देख कड़वे नीम में लगती हैं कब नारंगियां।

कुम्भकर्ण—अच्छा अब बातें न बना; युद्ध छेड़ और कुछ करके दिखा।

राम—कुम्भकर्ण! आज मैं तेरा सारा नशा उतारूंगा, याद रख कि तुझे युद्ध में अवश्य मारूंगा :—

कह दिया है मुंह से जो करके उसे दिखाऊंगा;
है मेरा निश्चय कि मैं सुरपुर तुझे पहुंचाऊंगा।

कुम्भकर्ण—अच्छा तो सम्भल!

राम—ले पापी यम के द्वार चल!

[भयंकर युद्ध होना, अन्त में कुम्भकर्ण का मारा जाना, परदा गिरना]

दृश्य पांचवां

(रावण दरबार)

रावण—युद्ध दिन प्रति दिन भयंकर होता जाता है; परन्तु हमारा पक्ष जीतने में नहीं आता है। देखो आज का संग्राम किस के हाथ रहे और कुम्भकर्ण की कहां तक बात रहे।

गुप्तचर—(आकर) महाराज की जय हो! पृथ्वीराज अन्धेरा हो गया बली कुम्भकर्ण भी गहरी नींद सो गया।

रावण—(चौंक कर) हैं? क्या कहा? क्या कुम्भकर्ण मारा गया?

गुप्तचर—हां महाराज?

रावण—बस-बस! अब निस्सन्देह लंका के बुरे दिन आ गये जो ऐसे-ऐसे योद्धा भी काल के गाल में समा गये? अफसोस!—

बढ़ती हुई विजय की पताका हो रुक गई।
आशाओं की हरी भरी शाखा ही झुक गई।।

[सिर झुकाकर शोक में बैठ जाना]

मेघनाद—पिता जी ? चिन्ता की क्या बात है ? आज देखोगे कि मैदान हमारे हाथ है।

रावण—नहीं-नहीं ? अब हमारा उन पर विजय पाना बहुत कठिन है।

मेघनाद—कठिन है। किस लिये ? क्या मैं बलहीन हो गया ? क्या देवताओं को परास्त करने वाला बल सो गया ? नहीं, नहीं ? आप घबराइये नहीं।

कसम है आप की मैं आज वह कौतुक दिखाऊ गा।
कि इकके चार और फिर चारके सौ सौ बनाऊंगा।।
समय बतलायगा उस राम का परिणाम क्या होगा।
प्रलय का नाच होगा आज का सग्राम क्या होगा।।

रावण—(प्रसन्न होकर) अच्छा, तो जाओ और युद्ध में वह कौशल दिखालाओ कि त्रिलोकी त्राहि २ बोल जाय और भय के कारण शत्रुओं की छाती हौल जाय।

युद्ध की भूमि से उठे जीत जिसका नाम है;
कह उठे दुनिया कि रावण तू ही बस सरनाम है।

मेघनाद—ऐसा ही होगा ! बजाओ ! हे वीरो ! अब रण का बाजा बजाओ !

लेकर बढ़ो विनाश की तलवार हाथ में;
बढ़ती हुई विजय भी चले साथ-हाथ में।

[मेघनाद का जाना, परदा गिरना]

दृश्य छठा

(रामादल कीछावनी)

राम—विभीषण जी ! कुम्भकर्ण ने केसा पराक्रम दिखाया मानो युद्ध में एक विशाल पर्वत ही उतर आया ?

विभीषण—क्यों नहीं महाराज ? वह लंका का सबसे बड़ा बलवान था उसको मार डालने वाला केवल आप का ही बाण था।

गुप्तचर—(आकर) महाराज की जय हो ? आज लंका की ओर से फिर मेघनाद लड़ने के लिये आ रहा है।

राम—तो आने दो ? मेरा भी उत्साह बढ़ा जा रहा है।

लक्ष्मण—(हाथ जोड़कर) भ्राता जी ? आज के युद्ध में तो मुझे ही जाने दीजिये और मेघनाद से अपना बदला स्वयं ही चुकाने दीजिये।

राम—भाई ! वह राक्षस बड़ा कठोर और पराक्रमी है।

लक्ष्मण—तो बात ही क्या है। में आप के चरणों की सौगन्ध खाकर कहता हूं कि आज उसे अवश्य मारूंगा और शक्तिबाण का बदला भली प्रकार उतारूंगा :—

रघुकुल आन है मुझको धनुष और तीर की सौगन्ध।
कसम माता सुमित्रा की, मुझे रघुवीर की सौगन्ध ॥
लड़ूंगा विश्व—शक्ति से, न पग पीछे हटाऊंगा।
यदि यमराज भी होगा, तो वध करके आऊंगा ॥

राम—अच्छा तात् ? यदि तुमने प्रण ही ठान लिया है तो जाओ मैं आशीर्वाद देता हूं कि शत्रु पर विजय पाओ।

लक्ष्मण—हां, यदि आपका आशीर्वाद साथ है तो फिर विजय लक्ष्मण के हाथ है ? (प्रणाम करके जाना)

राम—अंगद ! हनुमान ! सुग्रीव तुम भी साथ चले जाओ और युद्ध में लक्ष्मण का साहस बढ़ाओ।

सब—जैसी आज्ञा प्रभो ?

[तीनों का जाना, परदा गिरना]

दृश्य सातवां

(युद्ध भूमि)

मेघनाद—(गरज कर) आओ ! हे मौत के शिकारों ! अब मरने के लिये आओ। आज मुझे देखना है कि रामादल का कौन योद्धा मेरे सामने आता है; जिसका परलोक यात्रा को मन चाहता है :—

कौन मरने की सुबह को आरजू लेकर उठा ?
कौन है दुनियां से जिसका बोरिया-बिस्तर उठा?

लक्ष्मण—(आगे बढ़कर) बस-बस ! ओ कपटी ! उस दिन तो धोखा दे गया, क्या आज भी बचना चाहता है ? अरे धूर्त ! कायरों का काम करके वीरों में नाम लिखाता है।

मेघनाद—(तनक कर) अच्छा ! तू पहली मार को इतनी जल्दी भूल गया, कि फिर अहंकार में फूल गया ? नहीं जानता तो फिर जानले कि मैं मेघनाद हूं। देवताओं का शत्रु इन्द्रजीत मेघनाद :—

जो विजेता लोक का है और विष्णु धाम का;
विश्व में डंका बजा है आज जिसके नाम का।
जिसने रणधीरों को भी रण में कभी समझा नहीं
जिस के आगे काल सा बलवान भी ठहरा नहीं।
जिसने बालक जान कर पहले तुझे मारा नहीं;
आज फिर आया है उसके सामने सोचा नहीं।

लक्ष्मण—सोच लिया है। परन्तु अब तू भी सोच ले; देख मेघनाद ! इधर देख ! इस धनुष और बाण को देख ! और फिर विष्णु के वरदान को देख :—

किया है शैन तेरह वर्ष तक भूमि की शय्या पर।
किया भोजन फलो का और विजय पाई है निद्रा पर ॥

किया है काम को बस में, लगाई चैन को ठोकर।
मिटाया अपने जीवन को, चला सन्यास के पथ पर॥
उठाये कष्ट इतने तब कहीं पूरा परण होगा।
समझ ले आज निश्चय ही तेरा सुरपुर गमन होगा॥

मेघनाद—जा! जा! ओ मूर्ख छोकरे! ऐसी असम्भव बातें न बना! तू नहीं जानता, मैंने विकराल काल का भी गला तोड़ा है, बड़े-बड़े गम्भीर योद्धाओं का पामाल कर छोड़ा है।:—

जिस तरफ को आंख फेरी देवता तक डर गये।
क्रोध की अग्नि से लाखों वीर जल-जल मर गये॥
जिसको पकड़ा काल के पंजे में गोया फंस गया।
जिसको दाबा वह रसातल तक जमीमें धस गया॥

लक्ष्मण—अभिमानी! तू नहीं जानता कि फूंस के ढर को एक चिंगारी ही जला देती है। वृक्ष के बड़े आकार को छोटी सी कुल्हाड़ी ही गिरा देती है :—

कुछ बड़ाई हो नहीं सकती बड़े आकार से।
हार जाते हैं बड़े छोटे से ही हथियार से॥
कर्म जिस का है बड़ा वह ही बड़ा बलवान है।
देह तो मिट्टी है केवल आत्मा ही प्राण है॥

मेघनाद—समझा! ओ आत्मा के ज्ञानी! मैं अब तेरा मतलब समझा; तू मोठी-मीठी बातें बनाकर मेघनाद को फुसलाना चाहता है। छोटे-बड़े के उपदेश देकर अपनी जान बचाना चाहता है। अच्छा जा; यदि लड़ना नहीं जानता तो भाग जा।

कर्म भूमि है यहां बच्चों की चटशाला नहीं।
युद्ध का मैदान है यह खेल का पाला नहीं॥

लक्ष्मण—ओ राक्षस! जबान को लगाम कर और वीरों की तरह प्रहार को रोक थाम कर।

[युद्ध होना, मेघनाद का हार जाना]

मेघनाद—ठहर! जरा दम लेने दे।

लक्ष्मण—बस ! इसी साहस पर इतना अकड़ता था। यही वीरता लेकर बार-बार अग्नि के समान भड़कता था। अच्छा जा विश्राम कर। जब तक चाहे आराम कर।

मेघनाद—(स्वयं) हैं ! आज क्या हो गया ?

कांपती है देह और हाथों में ताले पड़ गये।
हे विधाता ! आज तो जीने के लाले पड़ गये।।

लक्ष्मण—मेघनाद ! अब भी समय है। अब भी बुद्धि को सम्भालो और राम की शरण लेकर लंका को नाश से बचा लो।

मेघनाद—(स्वयं) बस-बस, उपदेश बन्द कर, अधिक न उछल, ले अब सावधान हो और यम के द्वार चल।

[तलवार उठाकर आगे बढ़ना]

लक्ष्मण—आ ! ओ दुष्ट आ !

पापियों का पापमद में भूलना अच्छा नहीं।
पाप की टहनी का फलना फूलना अच्छा नहीं।।

[फिर युद्ध होना और मेघनाद का मारा जाना देवताओं का आकाश से फूल बरसाना, परदा गिरना]

दृश्य आठवां

(सुलोचना का महल)

सुलोचना—

गाना

जब से गए हैं प्राण नाथ काबू में मन नहीं रहा।
लगता था जिस में दिल मेरा यह वह भवन नहीं रहा।।
चारों तरफ करुण पुकार, छाया हुआ है अन्धकार।
जिसमें खुशी का था निवास अब वह सदन नहीं रहा।।
कागा अशुभ मना रहे, कुत्त रुदन मचा रहे।
रहता था मन जो नित मगन, अब वह मगन नहीं रहा।।
माथे की बिन्दी गिर गई, माला की लड़ बिखर गई।
कंगन मलीन हो गया, नथ का वरण नहीं रहा।।

विधना बता तो दे जरा, माया रची है आज क्या।
अशगुन हुए हैं सब 'कुशल' कोई चलन नहीं रहा॥

सखी—राजकुमारी ! आज हृदय में कैसी पीर है ? सदा प्रसन्न रहने वाला मन आज इतना क्यों अधीर है ?

सुलोचना—कुछ न पूछो सखी ! आज मन की कुछ निराली ही गति हो रही है। जब से स्वामी युद्ध में गये हैं निराशा प्राण खो रही है।

सखी—हैं ! आज तुम कैसी बातें कहने लगी। हमारे राजकुमार को हराने वाला कौन योधा है। जिसने बारह वर्ष तक स्त्री और नींद का त्याग किया हो ऐसा ब्रह्मांड में कौन जन्मा है।

सुलोचना—यह तो ठीक है ! परन्तु सखी; विधाता की गति जानी नहीं जाती :—

सभी बनते बिगड़ते हैं जगत केवल खिलौना है।
लिया है जन्म जिसने नाश भी निश्चय ही होना है॥

[आंगन में भुजा का गिरना]

सखी—(चौंक कर) हैं यह क्या ? कोई भारी वस्तु आकर गिरी है ! (भुजा को देखकर) ओहो ? कसा भयंकर सग्राम हो रहा है मानों अखण्ड का खण्ड हो गया है।

सुलोचना—क्या है ? देखूं ? जरा मेरे निकट तो लाओ।

सखी—कुछ नहीं ? राजकुमारी किसी वीर की भुजा है जो संग्राम से कट कर यहां आ गिरी है। देखो तो अभी तक रक्त बह रहा है।

सुलोचना—(ध्यान से देख कर) हाय ! हाय ! यह तो मेरा ही नाश हुआ है :—

मेरी तकदीर लूटी है मेरा ही भाग फूटा है।
दिया धोखा विधाता ने मेरा सुख चैन लूटा है॥

सखी—वीर बाला ! कैसी बातें करने लगीं? क्या तुम्हारे पति साधा-

रण योद्धा हैं ? उन्होंने तो देव-दानव, यक्ष-दिग्पाल, वरुण और काल सब को जीता है।

सुलोचना—यह ठीक है ! परन्तु यह भुजा अवश्य उन्हीं की है।

सखी—नहीं ! ऐसा होना असम्भव है।

सुलोचना—अच्छा यदि तुम्हें ऐसा ही भ्रम है तो लो तुम्हारा सन्देह भी मिटाती हूं ? (हाथ में खरिया देकर) लिख दे ! हे भुजा ! यदि तू स्वामी की भुजा है और मैंने स्वामी को सदैव अपना देवता समझा है तो सारा वृतान्त साफ-साफ लिख दे !

[भुजा का हाथ फैलाकर खरिया पकड़ना और आंगन में लिखना]

वह लिखा ! देखो हे सखी ! वह लिखा ! अहा !

दोहा—वीर लखन के हाथ से सुरपुर हुआ निवास;
प्राण पखेरू स्वर्ग में भुजा तुम्हारे पास।

(बेचैन होकर) लुट गई, भगवान, मैं अच्छी तरह लुट गई।

[सुलोचना का बेहोश होकर गिरना, परदा गिरदा]

दृश्य नवां

(रावण का दरबार)

रावण—आज मेघनाद ने अवश्य राम का सिर उड़ा दिया होगा और सारा झगड़ा सदैव के लिये मिटा दिया होगा।

मन्त्री—यथार्थ है महाराज।

[दूत का घबराये हुये प्रवेश]

दूत—(लड़खड़ाती जबान में) म—···हा·····राज ?

रावण—क्यों !

दूत—पृथ्वीनाथ ! अनर्थ हो गया !

रावण—क्या हुआ !

दूत—बड़ा ही पश्चाताप है ?

रावण—आखिर क्या बात है ?

दूत—महाराज ! मेघनाद युद्ध में·····

रावण—कहो-कहो ! जल्दी कहो !

दूत—महाराज ! मेघनाद युद्ध में काम आया ।

रावण—काम आया ! मेघनाद काम आया ! ओहो ! अनर्थ अन्याय !

किस तरह खाया है चक्कर आज यह आकाश ने ।
कर दिया है नाश मेरा पुत्र तेरे नाश ने ।।

मन्त्री—सावधान ! महाराज ! सावधान !

रावण—बस ! अब न छेड़ो ! मेरे घावों पर नमक न छिड़को ! अब मेरे क्रोध की अग्नि किसी प्रकार शीतल न होगी । अब मेरा उमड़ा हुआ जोश मध्यम नहीं पड़ सकता । लूंगा ! आज अपने पुत्र की मृत्यु का बदला लूंगा :-

मिटाकर अपने शत्रु को जगत से आज दम लूंगा ।
मैं सारे नाश का बदला अभी और एक दम लूंगा ।।

[तलवार खींचना]

द्वारपाल—महाराज की जय हो ! राजकुमार मेघनाद की स्त्री आई है और दरबार में उपस्थित होना चाहती है ।

रावण—हां ! बुलाओ ! चलती बार उसका मर्म भी पूछ लूं; उस अभागिन की व्यथा पर भी विचार कर लूं ?

[सुलोचना का गाते हुए प्रवेश]

सुलोचना—

गाना

बरबाद हो गई हूं महाराज क्या करूं ।
जब लुट चुका सुहाग तो कब तक जला करूं ।।
जिसने दिया था हाथ वही हाथ कट गया ।
अब आसरा ही क्या है कि जिस पर जिया करूं ।।
आशाओं की हरी-भरी खेती उजड़ गई ।
कब तक जहर के घूंट मैं बैठी पिया करूं ।।
वह जा रहा है जिसमें कि जीवन का साथ था ।
अब किस तरह वियोग के संकट सहा करूं ।।

संसार में नहीं है ठिकाना मुझे 'कुशल'।
अच्छा यही है स्वर्ग की अब यात्रा करूं ॥

रावण—बेटी ! तेरा रुदन सुन कर छाती फटी जाती है; वासुकी नागराज की राजकुमारी को विधवा वेश में देख कर आत्मा महान क्लेश पाती है ! परन्तु पुत्री ! धीरज धरो; कुछ घड़ी के लिये और शान्ति करो :—

याद रक्खो पाप का बदला उतारा जायगा।
एक के बदले में दल का दल ही मारा जाएगा॥

सुलोचना—नहीं महाराज ! मुझे बदला नहीं चाहिये ! मेरे सिर का ताज, मेरे मन का देवता; मेरी कामनाओं का चित्र चला गया अब मुझे भी उनके साथ विदा कीजिये। कृपा करके मेरे पतिदेव का सिर मंगा कर परलोक गमन की आज्ञा दीजिये।

रावण—सुलोचना ! तू क्यों चिन्ता करती है ? तेरे सामने मस्तकों के ढेर लगा दूंगा ! एक के बदले में राम, लक्ष्मण, सुग्रीव, हनुमान, नल विभीषण,जामवन्त आदि सब के सिर ला दूंगा।

घज्जियाँ उड़ने लगेंगी देखना आकाश पर।
सिर पे सिर देखोगी गिरते, लाश गिरती लाश पर।

सुलोचना—नहीं महाराज ! मुझे विनाश नहीं, केवल अपने पति का सिर चाहिये !

रावण—तू बच्ची है ! नादान है ! मेरे पुरुषार्थ को नहीं जानती है! रावण के बल और पराक्रम को नहीं पहचानती है; ,जा बैठ! और मेरे कौशल का तमाशा देख !

नाश की अग्नि बनूंगा और जलाता जाऊंगा।
काल की सूरत बनूंगा और खाता जाऊंगा॥

सुलोचना—बस महाराज ! मेरे परलोक गमन में देर न कीजिये; कृपा करके स्वामी का सिर मंगा दीजिये !

रावण—तो क्या शत्रुओं के दल में शीश मांगने जाऊं ? त्रिलोकी का सम्राट होकर तपस्वियों के सामने हाथ फैलाऊं !

सुलोचना—अच्छा तो मुझे आज्ञा दीजिये !

रावण—किस बात की ?

सुलोचना—पति का सिर मांग लाने की

रावण—कहां से ?

सुलोचना—रामादल से !

रावण—किस प्रकार ?

सुलोचना—याचना करके !

रावण—नहीं ! कभी नहीं ! रावण की पुत्र-वधू रामादल में जाये ! दर-दर की ठोकरें खाये और शत्रु के सामने हाथ फैलाये ! नहीं, कदापि न होगा। जा ! अपने भवन में जाकर विश्राम कर।

सुलोचना—महाराज !

रावण—बस ! अब कुछ नहीं ! जो कुछ कह दिया है वही होगा।

सुलोचना—(स्वयं) यदि कुछ और उत्तर देती हूं तो वृथा ही विवाद बढ़ता है; इसलिये अब वही उचित है कि माता जी के पास जाऊं और उनसे ही आज्ञा चाहूं।

(जाना)

रावण—बात गम्भीर होती जाती है और विजय की कोई सूरत नजर नहीं आती है ! अब यदि युद्ध को पीछे हटाता हूं तो कायर कहलाता हूं और यदि स्वयं लड़ने जाता हूं तो व्यवस्था को उलटी बनाता हूं। (सोच कर) वाह वाह ! खूब याद आया। अहिरावण ! मित्र अहिरावण ! ऐसे संकट के समय तू अवश्य काम आयगा, राम और लक्ष्मण का खोज तू ही मिटायगा।

[रावण का जाना, परदा गिरना]

दृश्य दसवां

(मन्दोदरी का महल)

मन्दोदरी—सच कहा है, जब नाश के दिन आते हैं तो कारण वैसे ही

बन जाते हैं। युद्ध का समाचार जितना भयंकर होता जाता है पतिदेव का ज्ञान उतना ही सोता जाता है ! ओह ! कैसे-कैसे वीर परलोक सिधार गये कितने महारथी समय की गति से हार गये !

गाना

कैसी चला चली है हर चीज चल रही है।
आंखों के सामने ही दुनिया बदल रही है॥
कल कल में सैंकड़ों कल गुजरी हुई हुई कल।
परसों नहीं रहेगी कल की जो कल रही है॥
सब कुछ अभी अभी था,पर अब नहीं है कुछ भी।
हर सांस कह रहा है मंजिल निकल रही है॥
अन्धेर इक न इक दिन इस तननगर में होगा।
बुझ कर रहेगी लौ जो जीवन की जल रही है॥
जीवन-बहार के दिन बीते कुशल हैं गिन।
वह भी गुजर रही है बाकी जो पल रही है॥

[सुलोचना का गाते हुए प्रवेश]

सुलोचना—

गाना

(तर्ज—तकदीर का फसाना जाकर……)

यह कैसी जिन्दगी है यह कैसी बेबसी है ?
दिल रो रहा है अपना तकदीर हस रही है।
आशा के फूल इक दम मुरझा के गिर गये हैं,
फूले फले चमन में कैसी हवा चली है।
हे मौत किस घड़ी यह लूटा सुहाग मेरा ?
उन की सुनी न अपने मन की कोई कही है,
घबराना, तड़फड़ाना, मचलाना,तिलमलाना।
कहदे कोई तो आखिर क्या यह भी जिन्दगी है॥
दुनिया के रास्ते पर बस चल चुके'कुशल'हम।
चलना है अब उसी पर मंजिल जो बच रही है॥

न्दोदरी—(रोते हुए) आह बेटी ! तुम्हें किन आंखों से देखूं ? तेरा यह विधवा वेश किस प्रकार निहारूं ? सुलोचना ! मेरा घर बिगड़ गया । बेटी, तेरा सुहाग उजड़ गया । :—

किस तरह देखूं तेरे सिन्दूर लुट जाने के दिन ।
हो गई विधवा यही थे खेलने खाने के दिन ।।

लोचना—माता जी ! यह सब कर्मों का चमत्कार है । भाग्य के आगे तो सारा संसार लाचार है ।

न्दोदरी—हां बेटी !

पुत्र के मरते ही मेरी गोद खाली हो गई ।
नष्ट बेटी अब तेरी मांगों की लाली हो गई ।।

लोचना—माता जी ! जो होना था वह हो गया ! मेरा और तुम्हारा भाग्य निराशा के अन्धकार में सो गया । परन्तु अब धैर्य से काम लीजिये और मुझे देवलोक जाने की आज्ञा दीजिये !

न्दोदरी—किस प्रकार दूं ? पुत्र तो चला गया अब तुझे भी जाने की आज्ञा दूं ! कुछ तो देख बेटी ! मेरी दशा को कुछ तो देख :—

हर तरह मेरा सहारा तो न खोना चाहिये ।
मेरे जीने के लिये कोई तो होना चाहिये ।।

लोचना—यह तो ठीक है, परन्तु माता जी ! मुझे तो जाना ही होगा । जीवन साथी का साथ निभाना ही होगा :—

मोह के धन्धे में फंस कर धर्म कैसे छोड़ दूं ।
टूटने वाला नहीं सम्बन्ध कैसे तोड़ दूं ।।

न्दोदरी—हां बेटी ! मैं तेरे पतिव्रत धर्म को जानती हूं ! और इस जन्मजन्मान्तर के अटूट सम्बन्ध को भी मानती हूं ! परन्तु इस समय संग्राम चल रहा है, सती की व्यवस्था किस प्रकार की जायगी ।

सुलोचना—माता जी ! इसकी आप कोई चिन्ता न कीजिये। के
मुझे पति का सिर लाने की आज्ञा दे दीजिये।
मन्दोदरी—परन्तु यह आज्ञा तो महाराज से लेनी चाहिये थी।
सुलोचना—उनसे मैं कह चुकी हूं और अनेक प्रकार से विनती
कर चुकी हूं परन्तु वे कोई ध्यान नहीं देते।
मन्दोदरी—हा ! आजकल उनकी बुद्धि उलटी हो रही है। उ
अच्छा और बुरा दिखाई नहीं देता। हित और अनहित
सुझाई नहीं देता।
सुलोचना—तो फिर अब क्या आज्ञा है ?
मन्दोदरी—अच्छा ! तुम चली जाओ और याचना करके अपने प
का सिर मांग लाओ ! मैं उन्हें समझा लूंगी।
सुलोचना—उपकार ! माता जी ! महा उपकार !

[सुलोचना का जाना, परदा गिरना]

दृश्य ग्यारहवां

(रामादल की छावनी)

राम—विभीषण जी ! रावण भी कितना हठधर्मी है कि इतने विन
के बाद भी हट नहीं छोड़ता। बन्धु और पुत्र की मृत्यु के
जाने पर भी संग्राम से मुंह नहीं मोड़ता :—
विभीषण—हां महाराज ! वह सदा से ऐसा ही अहंकारी है।
राम—सुनो ! यह मधुर और करुण स्वर कहां से आ रहा है ? इत
दुखी होकर कौन गा रहा है ?

[सुलोचना का गाते हुए प्रवेश]

सुलोचना—

गाना

कोई चैन जग में किये जा रहा है।
कोई गम के आंसू पिये जा रहा है !
किसी की उमंगें तो पूरी हुई हैं ;
कोई साथ हसरत लिये जा रहा है।

किसी के यहां बज रहे शादियाने,
कोई शोक मे दम दिये जा रहा है।
मिलन की खुशो में कोई है दिवाना।
विरह में कोई दम दिये जा रहा है॥

दूत--(आकर) महाराज की जय हो! रावण की पुत्रवधू उपस्थित होना चाहती है।

राम—रावण की पुत्रवधू? अच्छा जाओ! और आदर साहत ले आओ!

सुलोचना—(आकर) हे भक्त हितकारी! आप की जय हो! मंगलकारी! आप की जय हो!

विभीषण—महाराज! यह रावण को पुत्रवधू और मेघनाद की स्त्री सुलोचना है! संसार में धर्मपरायण और पतिव्रत की सच्ची प्रतिमा है!

राम—कहो देवी! अपने आने का कारण कहो!

सुलोचना—महाराज! मुझ पतिदेव की भुजा ने अपनी मृत्यु का समाचार लिख कर बता दिया है, मेरा सारा सन्देह मिटा दिया है? अब मैं सती होना चाहती हूं और स्वामी का सिर लेने के लिये आप की शरण में आई हूं।

राम—धन्य हो देवी! तुम सच्ची सती हो (सुग्रीव से) सुग्रीव जी विलम्ब न कीजिये और देवी को इनके पति का सिर ला दीजिये!

सुग्रीव—(सिर लाकर) लो देवी? अपने स्वामी का सीस लो!

सुलोचना—(सिर लेकर और प्यार करके) हाय नाथ? कितने हताश हो रहे हो? चेहरा मुरझा गया है, बालों में धूल भर गई है। कितने थके हुए दिखाई देते हो? (आंचल से सिर की धूल पूंछना)

सुग्रीव—(राम के आगे हाथ जोड़कर) महाराज? मेरे मन में एक महान शंका है यदि आज्ञा हो तो पूछ लूं?

राम—हां-हां ! अवश्य पूछो !

सुग्रीव—क्या बिना देह और प्राण के कटो हुई भुजा भी कुछ लिख सकती है ?

राम—हां सुग्रोव जी ! पतिव्रत धर्म में बड़ी शक्ति है !

सुग्रीव—यदि इतनी शक्ति है तो इसके पति का सिर अपने आप हंसेगा ?

राम—हां ! यदि यह इच्छा करेगी तो अवश्य हंसेगा ।

सुलोचना—हंस दीजिये ! हे नाथ ! जल्दी हंस दीजिये ! नहीं तो मेरा विश्वास घटता है। पतिव्रत धर्म की महिमा कम होती है ! क्या लक्ष्मण के वाणों ने इतना शिथिल कर दिया ? क्या युद्ध में लड़ते-लड़ते इतने व्याकुल हो गये ? हंस दीजिये, प्रभु क सामने तो मुझे लज्जित न कोजिये! हाँ,यदि मैंने मन वचन, कर्म से आप की सच्ची पूजा की है तो आप को अवश्य हंसना पड़ेगा। यदि मैंने आपको अपना ईश्वर हो माना है तो आपको अवश्य हंसना पड़ेगा !

[मेघनाद का सिर हंसता है]

सुग्रीव—अहा ! वह हंसा ! बड़ा हो आश्चर्य है ! निस्सन्देह पतिव्रत धर्म की महिमा बड़ो विचित्र है !

सुलोचना—अच्छा प्रभु ! अब आज्ञा दोजिये और कृपा करके आज का युद्ध बन्द रहने की घोषणा कर दीजिये।

राम—बहुत अच्छा देवी ! ऐसा ही होगा !

सुलोचना—अच्छा प्रभु ! प्रणाम !

[सुलोचना का जाना]

राम—धन्य है ! सती सुलोचना तुम्हें धन्य है। निस्सन्देह ! जो स्त्रियां छल कपट छोड़ कर सच्चे मन से पति की सेवा करती हैं वे संसार में यश प्राप्त करके भवसागर तरती हैं !

[परदा गिरना]

दृश्य बारहवां

[चिता लग रही है, सुलोचना, मन्दोदरी और सखियों सहित आती है]

सखियां— **गाना** (तर्ज—धोले-धोले रे खेवाटिया)

जाओ जाओ री सहेली पिया-दर्शन को।
जीवन-लीला सफल करो अब—
परस पूज पिया-चरनन को—
जाओ जाओ·····
झूठे जग का मोह त्याग कर—
गमन करो सुर-कानन को—
जाओ जाओ·····
देवपुरी में बालम तेरे—
तरस रहे मुख-देखन को—
भव-बन्धन को काट चलो अब—
'कुशल' अमर, सुख-साधन को—
जाओ जाओ·····

सुलोचना—अच्छा ! प्यारी सखियों ! अब विदा करो और मन में धीरज धरो। स्वामी के बिना अब अधिक ठहरा नहीं जाता; पतिदेव के वियोग में अधीर मन सन्तोष नहीं पाता ! (मन्दोदरी से) अच्छा माता जी ! प्रणाम !

मन्दोदरी— (सुलोचना को गले लगा कर) अच्छा बेटी ! जाओ ! (रोती है)।

[सुलोचना का सखियों से गले मिल कर और मन्दोदरी के पैर छूकर चिता में बैठ जाना]

सुलोचना— **गाना** (डेढ़ मिसरी)

जाती हूं निभाने को जो नारी का परण है—परलोक गमन है।

अब धूल नजर में यह मेरा राज भवन है—सब शोक करण है ।।
संग में ही पति के है गति नार सती की—नीति यही कहती है ।
उपदेश पुराणों का है वेदों का कथन है—दुनिया का कहन है ।।
स्वामी के चरण छोड़ के दुख कैसे उठाऊं—और पाप कमाऊं ।
संसार में जो आया है निश्चय ही मरण है—सब झूठा चलन है।।
ठहरो हे पतिदेव ! यह जल्दी नहीं अच्छी—आने दो मुझे भी ।
दाता मुझे मुक्ति की तुम्हारी ही शरण है—अब यह ही लगन है ।।

[चिता में अग्नि का लगाया जाना, सुलोचना का सती होना परदा गिरना सीन पर ड्राप]

बारहवां अंक

दृश्य पहला

(शिव मन्दिर)

[रावण का गाते हुए प्रवेश]

रावण— गाना

सभी मतलब की दुनिया में गरज के यार देखे हैं।
लगी में कूदने वाले कहीं दो चार देखे हैं॥
तरसते हैं जो जाने को, उन्हें दाना नहीं मिलता।
जहां इच्छा नहीं कोई, वहा भण्डार देखे हैं॥
किसो का घर उजड़ता है किसी घर साज सजते हैं।
कहीं खण्डर भी देखे हैं, कहीं दरबार देखे हैं॥
किसी का खून बह जाये तो कोई गम नहीं करता।
किसी पर मरने वाले मँकड़ों तैयार देखे हैं॥
कहीं नाचीज लोगों ने 'कुशल' सिर ताज पहने है।
कहीं पर ठोकरें खाते हुए सरदार देखे हैं॥

अच्छा, बस अब शिव जो की वन्दना के लिये बैठ जाता हूं। और आकर्षण मन्त्र द्वारा अहिरावण को यहीं बुलाता हूं।

[रावण का ध्यान में बैठ जाना, अहिरावण का आना]

अहिरावण—हैं! मित्र रावण! तुमने मुझे किस लिये याद किया है? अब और किसे जीतने का निश्चय किया है?

रावण—(खड़े होकर) ओहो! तुम आ गये मित्र! आओ पधारो! मेरे समीप आसन पर बैठकर मेरे मन की व्यथा सुनो।

अहिरावण—(बैठकर) कहो मित्र! कुशल तो है? ऐसा क्या संकट आया है जो मुझे इतनी शीघ्रता से बुलाया है?

रावण—क्या बताऊं मित्र ! कुछ समय से अयोध्या के दो राजकुमार पंचवटी पर आये हुए थे। एक दिन उन मूर्खों ने बहिन स्वरूप-नखा के नाक-कान काट डाले और जब खर-दूषण उस की सहायता को गये तो उन को मार डाला ! मैंने यह समाचार पाया तो राम की स्त्री सीता को चुरा लाया ! इसी छेड़छाड़ में कुम्भकर्ण, मेघनाद आदि योद्धा भी मारे गये और हजारों वीर मृत्यु के घाट उतारे गये। हे मित्र ! बदले की भावना ने मुझे व्याकुल बनाया है इसलिये तुम्हें बुलाया है !

अहिरावण—दानवेश ! धर्म और नीति को छोड़कर कुमार्ग पर चलने में भलाई नहीं है। यद्यपि मित्र का यह कर्तव्य नहीं तो भी मैंने सच्ची बात कही है।

रावण—मित्र ! मैंने तुम्हें उपदेश देने के लिये नहीं, सहायता करने को बुलाया है। क्या मित्र होकर तुमने अपना यही कर्तव्य निभाया है ?

अहिरावण—ऐसा न कहो रावण! मैं तुम्हारे लिये प्राण भी दे सकता हूं मित्र का कर्तव्य है कि मित्र को सच्चा मार्ग दिखाये किन्तु यदि वह फिर भी न माने तो प्रत्येक दशा में उसका साथ निभाये। अच्छा बताओ कि तुम क्या चाहते हो ?

रावण—तुम्हें कामद देवी का वरदान है कि तुम हनुमान के अतिरिक्त और किसी से न मारे जाओगे। इसलिये प्रातःकाल सग्राम में चले जाओ और राम-लक्ष्मण दोनों भाइयों को ठिकाने लगाओ।

अहिरावण—इससे तो यही अच्छा है कि रात्री में ही दोनों को चुरा ले जाऊं और देवी की भेंट चढ़ाऊं। जिस से तुम्हारा काम भी बन जाये और कामद देवी भी सन्तुष्ट हो जाय।

रावण—वाह-वाह ! यह और भी सुन्दर है। अच्छा अब अर्द्ध-रात्रि का समय आने वाला है, इसलिये रामादल में चले जाओ और मेरे मन की चिन्ता को मिटाओ।

अहिरावण—लो मैं जाता हूं ! जब तुम्हें प्रकाश दिखाई दे तो जा
लेना कि अहिरावण उनको हर कर ले जा रहा है ।

[जाना, परदा गिरना]

दृश्य दूसरा

(रामादल की छावनी)

राम—अब रावण के पास उपाय ही क्या रह गया है ! या त
जानकी को लेकर शरण में आयगा और या अनेक योद्धा
की तरह वह भी मारा जायगा ।

सुग्रीव—महाराज ! रावण बड़ा हठधर्मी है वह सीधी तरह कभी
मानेगा !

विभीषण—और मेरा विचार है कि अब वह इधर-उधर दूत
दौड़ाएगा और युद्ध में भाग लेने के लिये अपने सम्बन्धियों
तथा इष्टमित्रों को बुलायेगा !

राम—क्या उसके सहायक अभी और कुछ रह गये हैं ?

विभीषण—हां प्रभो ! उसके सम्बन्धियों में अभी कई बलवान
बाकी हैं ।

हनुमान—(हाथ जोड़ कर) महाराज ! आधी रात होने को आई
और सारी वानर सेना अलसा गई है, इसलिये अब सब को
सोने की आज्ञा दीजिये और आप भी विश्राम कीजिये ।

राम—हां, ठीक है । अच्छा सब लोग आराम करें ।

सुग्रीव—हनुमान जी ! आप पहरे पर सावधान रहें !

हनुमान—बहुत अच्छा महाराज ! आप निश्चिन्त होकर सो जाइये

[सब का सो जाना, हनुमान का पहरे पर सावधान खड़े हो जाना]

अहिरावण—(आकर और एक ओर होकर) अहा ! भीतर कैसे जाऊं
और कौन सी युक्ति से राम-लक्ष्मण का चुराऊं ? मेरा शत्रु
वानर बड़ी सावधानी से पहरा दे रहा है और सब को अपनी
पूंछ के परकोट में ले रहा है । (कुछ सोचकर) बस-बस अ

यही उचित है कि विभीषण का वेश बनाऊ और वानर को धोखा देकर परकोट में घुस जाऊं ।

[अहिरावण का विभीषण का वेश बनाना]

अहिरावण— गाना

राघव भगतन के हितकारी !
दशरथ सुत, कोशल के राजा, विपत विदारण, संकट हारी ।।
श्याम वरण, पद-पङ्कज, लोचन कमल, चरण मुद मगलकारी ।
कुण्डल कानन तिलक भाल प्रभु मुकुट सीस माला उर धारी ।।
गणिका, व्याध, अजामिल तारे पाप-ताप दुख हारी ।
भव-सागर से पार करो प्रभो ! अशरण शरण दीन हितकारी ।।

हनुमान— (अहिरावण को आगे बढ़ते देखकर) कौन है ? वहीं खड़ा रह! आगे कहां जाता है !

अहिरावण –जय ! प्रभो जानकी-नाथ की जय !

हनुमान—कौन है भाई ! आधी रात को रामादल में क्या काम है ?

अहिरावण—कोई नहीं ! मैं हूं विभीषण !

हनुमान—(देख कर) विभीषण जी ! इस समय तक कहां रहे !

अहिरावण—भाई ! समुद्रतट पर सध्या करने चला गया था ! आज देर हो गई । प्रभु के भय से लौट आया हूं !

हनुमान—(मार्ग छोड़कर) अच्छा ! लो चले जाओ !

[अहिरावण का परकोट में प्रवेश करना]

अहिरावण—(स्वयं) ओह ! बड़ी कठिनाई है ! यदि कोई जाग गया तो लेने के देने पड़ जाएंगे (सोच कर) ठीक है सब पर मोहनी मन्त्र डाल कर अचेत बनाता हूं और आप अदृश्य होकर दोनों भाईयों को उठाकर ले जाता हूं !

[सब पर मोहनी डालकर राम-लक्ष्मण को उठा ले जाना और कुछ समय बाद वानरों का जागना]

सब—(इधर-उधर देख कर) हैं ! प्रभु कहां हैं ? आज तो लक्ष्मण का भी पता नहीं !

अंगद—क्यों जामवन्त जी ! आप को कुछ ज्ञात है ?

जामवन्त—नहीं भाई। मैं तो तुम्हारे पास ही सो रहा था ?

नल—सुग्रीव जी ? आप को कुछ पता है कि प्रभु कहां चले गये ?

सुग्रीव—नहीं भाई। मैं तो बिल्कुल अनजान हूं ? रात हनुमान जो पहरे पर थे उन्हीं से पूछना चाहिये।

नल—हनुमान जी ! आप ही बतलाइये कि प्रभु कहां हैं ?

हनुमान—क्या बताऊं भाई ! मैं स्वय आश्चर्य में हूं।

अंगद—हाय-हाय ! अब रावण का संहार कौन करेगा ? माता जानकी कैसे जीवित रहेंगी ?

जामवन्त—हनुमान जी ! रात्रि में जब आप पहरा दे रहे थे तो प्रभु कैसे चले गये ?

हनुमान—क्या बताऊं ? रात में यहां कोई भी नहीं आया, केवल विभीषण जी तो संध्या करके लौटे थे !

विभीषण—नहीं-नहीं ! मैं तो यहीं था !

हनुमान—यह आप कैसे कहते हैं ? मैंने स्वयं देखा कि आप अर्द्ध रात्रि को आये थे।

विभीषण—क्या मैं ?

हनुमान—हां-हां ! आप !

विभीषण—यही रूप था ?

हनुमान—बिल्कुल यही !

विभीषण—और ऐसी ही बोली !

हनुमान—जी हां ! ऐसी ही !

विभीषण—बस मैं समझ गया ! प्रभु को पाताल का राजा अहिरावण हर कर ले गया है। संसार में वही इतन चालाक राक्षस है जो मेरा रूप बनाना और बोली बोलना जानता है।

अंगद—तो अब क्या होगा ? हम प्रभु को कैसे पायेंगे ?

विभीषण—बस ! जिस में बल हो वह सीधा पाताल जाये और अहिरावण को जीत कर प्रभु को छुड़ा लाये !

सुग्रीव—तो ऐसा महान कार्य हनुमान जी के सिवा और कौन कर सकता है ?

हनुमान—हां-हां ! मैं ही जाऊंगा और चौदह भवन तीन लोकों में प्रभु जहां भी होंगे वहीं से खोज कर लाऊंगा ।

सब—धन्य है ! केसरी-नन्दन, तुम्हें धन्य है ।

हनुमान—लो मैं जाता हूं ! आप सब लोग सावधान रहना ।

[हनुमान का जाना, परदा गिरना]

दृश्य तीसरा

(पाताल नगर का द्वार)

[मकरध्वज पहरा दे रहा है, हनुमान गाते हुए आते हैं]

हनुमान—

गाना

(तर्ज—चल चल तू ए हवा)

चल चल पवन कुमार चल चल पवन कुमार ।
बनकर पवन का रूप निशाचर के दल का मार।।
चल चल·····
बाधा जो आए राह में उस का न कर विचार ।
मंगल-निधान नाथ के चल कर चरण निहार ।।
चल चल·····

मकरध्वज—(हनुमान को जाते देखकर) कौन है ? जो ऐसा निडर होकर नगर में घुसा जा रहा है ।

हनुमान—और तू कौन है जो मेरे मार्ग में रोड़ा अटका रहा है ।

मकरध्वज—जानता नहीं कि मैं पवनसुत हनुमान का पुत्र हूं ।

हनुमान—हनुमान का पुत्र ! तेरा नाम ?

मकरध्वज—मकरध्वज !

हनुमान—अरे मूर्ख ! ऐसे खोटे वचन क्यों बोलता है ? मेरे तो सपने में भी पुत्र नहीं हुआ ! मुझे तो कभी काम भी नहीं व्यापा ।

मकरध्वज—तो क्या आप ही हनुमान हैं ?

हनुमान—हां ! पवनसुत हनुमान मैं ही हूं। तूने ऐसी झूठी बात किस लिये गढ़ी है ?

मकरध्वज—झूठी बात नहीं, बिल्कुल सत्य कह रहा हूं। सुनिये जिस समय आप लंका को जलाकर समुद्र के ऊपर से उड़ते हुए आ रहे थे उस समय आपके शरीर से पसीना टपक कर समुद्र में गिर पड़ा और उसे एक मछली ने निगल लिया। बस उसी के गर्भ से मैंने जन्म पाया और फिर अहिरावण की सेवा के लिये पाताल चला आया !

हनुमान—यहां क्या काम करता है ?

मकरध्वज—मैं नगर के द्वार पर पहरा देता हूं।

हनुमान—अच्छा पुत्र ! मैं इस समय एक आवश्यक कार्य के लिये जा रहा हूं। क्या तू बतला सकता है कि इस समय अहिरावण कहां मिलेगा !

मकरध्वज—महाराज ! उसके यहां कामद देवी को बलिदान देने की तैयारी हो रही है और इस समय वह होम कर रहा है।

हनुमान—अच्छा तो सामने से हट जा और मुझे नगर में प्रवेश करने दे।

मकरध्वज—नहीं पिता ज ! मकरध्वज अपने स्वामी की आज्ञा का उल्लघन नहीं करेगा और मेरे होते हुए कोई भी नगर में पैर नहीं धरेगा !

हनुमान—हे पुत्र ! देर होने से हमारा काम बिगड़ जाने का भय है इसलिये हमें तुरन्त जाने दो !

मकरध्वज—नहीं महाराज ! मैं विश्वासघात नहीं कर सकता। आप वापस लौट जाइये। मैं कदापि भीतर न जाने दूंगा।

हनुमान—(धक्का देकर) अरे हट ! मेरा रास्ता छोड़, दीवार की तरह क्यों अड़ा खड़ा है ?

मकरध्वज—(पकड़ कर) नहीं ! यह नहीं हो सकता ! आपको लौ जाना पड़ेगा !

हनुमान—अच्छा तो आ ! पहले तेरा बल ही देखता हूं !

[युद्ध होना, हनुमान का मकरध्वज को बांध कर डाल देना और नगर में प्रवेश करना]

दृश्य चौथा

(कामदेवी का मन्दिर)

हनुमान—(स्वयं आकर) यही है ! कामद देवी का मन्दिर यही है यहीं वह दुष्ट निशाचर स्वामी को लेकर आयगा और इसके सन्तुष्ट करना चाहेगा। बस अब यही उचित है कि देवी के रसातल में धंसा दूंगा और मन्दिर में बैठकर यहां का दृश्य देखूं।

[हनुमान का मन्दिर में बैठ जाना, स्त्रियों का देवी पूजा करने आन और गाना]

स्त्रियां— **गाना (दुर्गे पूजन चलो सब गोरी)**

जय जय जननी जगत जगदम्बा !
मन्दिर तेरा, महा सजा-दीपक जला, जला, जला।
नित पूजा करें सब अम्बा। जय जय·····
दुर्गे तेरी महा कला-संकट मिटा, मिटा, मिटा।
जन द्वारे खड़े तेरे अम्बा। जय जय—···

[स्त्रियों का जाना, राक्षसों का राम-लक्ष्मण को लेकर आना पीछे-पीछे अहिरावण का प्रवेश]

राक्षस—महाराज ! आज्ञा दीजिये कि इन दोनों का सिर उड़ा दिय जाये और माता भवानी की भेंट चढ़ा दिया जाये।

अहिरावण—नहीं, अभी नहीं। राजनीति के अनुसार तीन घड़ी ठह जाओ और इनके मन की इच्छा पूछ लो।

राक्षस—माता भवानी के बलिदानो ! अब थोड़ी देर और जी लो और यदि कुछ इच्छा हो तो खालो पीलो ।

राम—बस भाई ! जब कुछ देर का ही जीना है तो काहे का खाना पीना है !

लक्ष्मण—भ्राता जी ! अब क्या करें ? अपनी सहायता के लिये किसे बुलायें ?

राम—हां भाई, वरदान के कारण हम अहिरावण को नहीं जीत सकते, आह कौन सुनता है ? इस पाताल नगरी में हमारी पुकार कौन सुनता है ?

गाना

समय जब खोटा आता है सहारा ही नहीं मिलता ।
भवर में डूबते जन को किनारा ही नही मिलता ।।
घटायें संकटों की सीस पर जब घिर के आती हैं ।
निराशा की अन्धेरी में उजाला ही नही मिलता ।।
पराये देश में चारों तरफ शत्रु ही शत्रु हैं ।
जिधर देखें उधर कोई हमारा ही नहीं मिलता ।।
'कुशल' आकर फंसे हैं आज हम कैसी मुसीबत में ?
लगाले जो कि छाती से वह प्यारा ही नहीं मिलता ।।

अहिरावण—अच्छा ! बहुत रो चुके । बहुत कुछ अधीर हो चुके । अब केवल एक घड़ी बाकी है इसलिये सावधान हो जाओ और जीवन से हाथ उठाओ ।

लक्ष्मण— **गाना** तर्ज (सोहनी)

याद अब किस की करें हो कोई तो आधार भी ।
डूबती है नाव छूटी हाथ से पतवार भी ।।
रोते-रोते हाय दोनों को सवेरा हो गया ।
सूखती जाती है अब आंखों के जल की धार भी ।।
हो गये मजबूर देवी तेरे वरदानों मे हम ।
अन्यथा सब देख लेते दुष्ट की तलवार भी ।।

हे विधाता तीन लोकों में नहीं ! अपना कोई।
भूल बैठे हैं कुशल जब अन्जनी-सुकुमार भी ॥

[मन्दिर का फटना, हनुमान का बाहर आना]

हनुमान—नहीं; महाराज सेवक स्वामी को कैसे भूल सकता है ?

अहिरावण—(घबरा कर) हैं ! कौन ?

हनुमान—तेरा काल !

अहिरावण—चल हट। मेरे कार्य में विघ्न न डाल।

हनुमान—ओ दुष्ट ! पापी ! चांडाल अब नर्क में डेरा डाल।

अहिरावण - ओ पाजी। क्या तू नहीं जानता कि मैं अहिरावण हूं।

हनुमान—और क्या तू नहीं जानता कि मैं पवन सुत हनुमान हूं।

अहिरावण—(डर कर) हनुमान ! पवन सुत हनुमान !

हनुमान—हां हां हनुमान ! पवनसुत हनुमान !

अहिरावण—बस ! अब गये प्राण !

[युद्ध होना, अहिरावण का मारा जाना]

हनुमान—चलिये प्रभो !

राम—धन्य हो हनुमान जी; तुम धन्य हो ! कहो, यहाँ तक कैसे आए ?

हनुमान—महाराज ! आप के वियोग में सारे वानर घबरा रहे हैं तड़प-तड़प कर प्राण गंवा रहे हैं। अब चलिये अधिक देर न लगाइये, वहां पहुंचने पर ही सारा वृतान्त बताऊंगा।

राम—अच्छा तो चलो।

हनुमान का राम लक्ष्मण को कन्धे पर बिठा कर ले जाना, परदा गिरना]

दृश्य पांचवां

(रावण दरबार)

रावण—रात्रि के प्रकाश से सिद्ध होता था कि अहिरावण उन दोनों

तपस्वियों को चुरा कर ले गया और सारी वानर सेना को धोखा दे गया। वाह-वाह। मेरे मित्र भी कैसे विचित्र हैं :—

राम तो है चीज ही क्या काल भी भयभीत हो।
जिस के ऐसे मित्र हों कैसे न उसकी जीत हो॥

मन्त्री—यथार्थ है महाराज।

रावण—अच्छा इस विजय के दिन आनन्द बधाई गाई जाय, लका का एक-एक घर और एक-एक गली सजाई जाय। सारे नगर में दीवाली मनाई जाय :—

हर तरफ आनन्द ही आनन्द हो छाया हुआ।
हर कोई मैंखार की मस्ती में हो आया हुआ॥

मन्त्री—बहुत अच्छा महाराज! ऐसा ही होगा।

रावण—साकी! आज तो बिल्कुल न रख बाकी! :—

तुझको कसम है मैं की जो कोई कसर करे।
ऐसी पिला दे अब तो जो ठंडा जिगर करे॥

मन्त्री—न खाली बैठ ओ साकी! हमें सर सर पिलाता जा।
उधर भर-भर के लाता जा इधर भर-भर पिलाता जा॥

सभासद—साकी! ओ साकी!

अब के बहुत दिनों में चला दौर जाम का।
रख दे उठा के जाम अलग मेरे नाम का॥

[अप्सराओं का आना और गाना]

अप्सरा—

गाना

साकी तेरी नजर न इधर को फिरी कभी।
जी भर के दमबदम नहीं हमको मिली कभी॥
शीशे में बन्द रह के ही जलवा दिखा गई।
होंठों से लगने पाई न नाजुक परी कभी॥
बहके वह हाथ शौक का प्याला बिखर गया।
हमने अगर शराब की मस्ती भरी कभी॥

साकी न कर ख्याल बराबर पिलाये जा।
आती नहीं सखी के यहां तो कभी कभी॥

रावण—वाह वाह! आज तो चैन लुटा जा रहा है। जिन्दगी का असली आनन्द आ रहा है।

गुप्तचर—(आकर) महाराज की जय हो! श्रीमान् अनर्थ हो गया!

रावण—क्या हुआ?

गुप्तचर—अहिरावण भी मारा गया!

रावण—(चौंककर) हैं! मारा गया! किसने मारा?

गुप्तचर—हनुमान ने!

रावण—आह! वज्रपात हो गया:—

अफसोस आरजूओं की बस्ती उजड़ गई।
कैसी बनी थी बात कि बनकर बिगड़ गई॥

गाना

किस-किस तरह के दुनिया पहलू बदल रही है।
तकदीर के न आगे तदबीर चल रही है॥
जिस-जिस जमी पे मैंने अपना कदम जमाया।
वह ही कदम के नीचे मानो फिसल रही है॥
कितने बली हमारे परलोक को सिधारे।
दहशत से जिनकी दुनिया अब तक दहल रही है॥
अरमान लुट चुके हैं सब मित्र छुट चुके हैं।
गम की कुशल चिता में तकदीर जल रही है॥

मन्त्री—महाराज! शान्ति कीजिये! इतने निराश न हूजिये।

रावण—आह! अब किस पर शान्ति करूं? किसके भरोसे पर धीरज धरूं?

मन्त्री—महाराज! जरा विचार तो कीजिये कि आपका बली पुत्र मारान्तक बहुबाबलपुर में राज्य कर रहा है जिसे मूलों में उत्पन्न होने के कारण आप ने समुद्र में बहा दिया था।

रावण—ठीक! बिल्कुल ठीक! तुमने खूब याद दिलाया, और मेरे

सच्चे हितैषी का स्मरण कराया ! अच्छा किसी दूत को बुलवाओ और नारान्तक के पास बहुबाबलपुर सन्देश भिजवाओ ।

मन्त्री—महाराज ! धूमकेतु बड़ा चतुर और योद्धा है, यदि उसे भेज दिया जाये तो अच्छा है ।

रावण—हां-हां ठीक है । उसे ही बुलाओ ।

मन्त्री—द्वारपाल ! धमकेतु को अभी हाजिर करो ।

द्वारपाल—जो आज्ञा श्रीमान ! (जाना और धूमकेतु को लेकर आना)

धूमकेतु—महाराज की जय हो, सेवक को क्या आज्ञा है ?

रावण—तुम अभी बहुबाबलपुर चले जाओ और वहां के राजा नारान्तक के पास हमारा पत्र पहुंचाओ ।

धूमकेतु—जैसी आज्ञा महाराज !

[धूमकेतु का जाना, परदा गिरना]

दृश्य छठा

(नारान्तकदरबार)

नारान्तक—मेरे यश और कीर्ति को जानता संसार है ।
मेरा वैभव उच्च है मेरा अमिट भण्डार है ।।
धाक से कम्पा दिया है लोक और सुरधाम को।
जानते है आज सब नारान्तक के नाम को ।।

मन्त्री—ठीक है महाराज !

द्वारपाल—महाराज की जय हो ! लंका का राजदूत आया है जो श्रीमान के नाम कोई सन्देश लाया है ।

नारान्तक—अच्छा, आने दो !

धूमकेतु—(आकर) महाराज की जय हो ! लंकापति रावण ने मुझे भेजा है और आपके नाम यह पत्र दिया है ।

नारान्तक—हां हां ! हमने सुना है कि रावण हमारे पिता हैं, कहो

धूमकेतु—कुछ न पूछो महाराज ! आज लंका पर बड़ी आपत्ति आ रही है शत्रुओं की सेना चारों ओर से मण्डरा रही है।

नारान्तक—शत्रुओं की सेना ? ऐसा कौन हिये का अन्धा है जिस ने लंका पर आक्रमण कर दिया है !

धूमकेतु—महाराज ने पत्र में सब कुछ लिख दिया है और आप को साथ लेकर आने को कहा है !

नारान्तक—मन्त्री जी ! यह पत्र पढ़कर सुनाओ !

मन्त्री—(पत्र पढ़ता है) प्रिय पुत्र, आनन्द रहो ! मैं अभागा हूं जो तुम जैसे पुत्र से अलग पड़ा हूं। आजकल लंका पर एक महान संकट आया हुआ है। राम और लक्ष्मण नामक अयोध्या के दो राजकुमारों ने बड़ा अनर्थ कर डाला है और मेरे सारे योद्धाओं को मार डाला है ; इस समय मुझे तुम्हारी सहायता की बड़ी आवश्यकता है इसलिये यह पत्र पाते ही पल की देर न लगाना और धूमकेतू के साथ तुरन्त चले आना।

तुम्हारा पिता 'रावण'

नारान्तक—ओह ! दो राजकुमारों का इतना साहस कि किसी का भी भय न खायें और निडर होकर लंका पर आक्रमण करने चले आवें। अच्छा मैं अभी जाता हूं और उनको ठिकाने लगाता हूं :—

कौन हैं जो आ गये हैं तंग अपनी जान से।
ना समझ बाजी लड़ा बैठे हैं अपने प्राण से॥
मौत से टकराएगा तो नाश होता जायगा।
सामने जो आयगा भूमि पै सोता जायगा॥

(मन्त्री से) अच्छा मन्त्री जी ! सेना को कूच की आज्ञा सुना दी जाय और हमारी सवारी भी सजा दी जाय। हथियार और रसद आदि का ठीक-ठीक प्रबन्ध किया जाय और प्रातः काल ही कूच बोल दिया जाय !

मन्त्री—जैसी आज्ञा महाराज ! [मन्त्री का जाना, परदा गिरना]

दृश्य सातवां

(रामादल की छावनी)

राम—विभीषण जी! आज तो दक्षिण की ओर से बादल सा गरजता हुआ आ रहा है और बड़ा ही भयंकर अन्धकार छा रहा है! न जाने क्या कारण है?

विभीषण—महाराज! ऐसा प्रतीत होता है कि किसी राजा की सेना चढ़ी आ रही है क्योंकि बीच-बीच में बिगुल और रणभेरी भी सुनी जा रही है!

राम—सम्भव है ऐसा ही हो!

दूत—(आकर) महाराज की जय हो! रावण का पुत्र नारान्तक दलबल सहित बढ़ा आ रहा है, ज्ञात हुआ है कि रावण का दूत उसे बुला कर ला रहा है।

राम—क्या रावण का कोई पुत्र नारान्तक भी है!

विभीषण—हां महाराज! यह आजकल बहबाबलपुर का राजा और बड़ा पराक्रमी योद्धा है!

राम—अच्छा तो हनुमान जी! तुम लक्ष्मण सहित चले जाओ और मार्ग में ही रोक कर उस का अहंकार मिटाओ।

हनुमान—जैसी आज्ञा प्रभो!

[हनुमान, लक्ष्मण आदि का जाना, परदा गिरना]

दृश्य आठवां

(रास्ता)

नारान्तक—(हनुमान को आते देख कर) धूमकेतु! यह कौन है जो सामने से अकडता हुआ आ रहा है; मानों कोई युद्ध विजय करके आपे में नहीं समा रहा है।

धूमकेतु—महाराज! यह हनुमान नामक वानर बड़ा ही वीर और

पराक्रमी है। इसी ने एक बार लंका को जलाया था और अहिरावण को मार कर दोनों भाइयों को बचाया था !

नारान्तक—चलो ! तो अच्छा ही हुआ। पहले मुहूर्त में ही शिकार मिला ! :—

चढ़ रहा है जो इसे सारा नशा खिल जायगा,
बैर का रावण के बदला आज ही मिल जायगा।

हनुमान—(नारान्तक का आगा रोक कर) ठहर ! ओ नारान्तक ! कहां जाता है ? हमारी आज्ञा के बिना ही किधर पांव बढ़ाता है :—

आ गया मरने को तू भी खिंच के अपने पाप से !
कर यहां दो हाथ पहले; पीछे मिलना बाप से !

नारान्तक—आ ! आ ! मैं भी यही चाहता था कि पहले तुम्हें ही देखता जाऊं, पिता से मिलने पर कोई तो शुभ सूचना सुनाऊं। अच्छा हुआ कि पहले तू ही आ गया, मुहूर्त तो खाली न गया :—

सुन चुका हूं मैं अभी सब से अहंकारी है तू।
देखना मुझ को यही है कितना बलकारी है तू॥

हनुमान—अच्छा तो सम्भल ! और अच्छी तरह देख हमारा बल।

[बहुत देर तक युद्ध होना; नारान्तक का गिरना]

हनुमान—चल दूर हो पापी ! इतना किस लिये उछल रहा था ? क्या इसी बल पर आगे से निकल रहा था ?

नारान्तक—(उठ कर) अरे पाजी ! इतना किस लिये उछल रहा था अब बच कर कहां जाता है, देखता हूं कि तुझे कौन बचाता है ?

लक्ष्मण—बस-बस इतनी बातें क्यों बनाता है ? यदि वीर है तो पराक्रम क्यों नहीं दिखाता है ?

नारान्तक—अरे मूर्ख :—

सोच ले दुनिया से तेरा आबो दाना उठ गया।
जिन्दगी के दिन गये सुख का जमाना उठ गया॥

लक्ष्मण—तो क्या तुझे भी लड़ना आता है? जो ऐसी बातें बनाता है? :—

जान से एक एक की बदला उतारा जायगा।
यह समझ ले वंश का ही वंश मारा जायगा॥

नारान्तक—ओह! इतना मुंहफट! इतना बोचाल! देखने में सीधा और आदत का चांडाल! :—

चाहता है जी तेरा जाने को यम के धाम को?
छोड़ जायेगा यहां रोता बिलकता राम को॥

लक्ष्मण—यह तो समय ही बतायगा कि यम के धाम कौन जायगा।

नारान्तक—अच्छा तो आगे बढ़ और सावधान होकर लड़।

[बहुत समय तक युद्ध होना किसी का न हारना]

नारान्तक—देखो! अब संध्या का समय हो गया है और सूर्य भी अस्ताचल को जा रहा है। वीर लोग रात्रि में युद्ध नहीं किया करते :

लक्ष्मण—अच्छा तो जा! अब विश्राम कर! प्रातःकाल फिर देखा जायगा कि तू कितना पराक्रम दिखलायगा?

[सब का जाना, परदा गिरना]

दृश्य नौवां

(रावण दरबार)

धूमकेतु—(आकर) महाराज की जय हो! नारान्तक जी आ गये हैं।

रावण—(मन्त्री से) अच्छा मन्त्री जी! तुम जल्दी जाओ और उसे आदर सहित ले आओ!

मन्त्री—जैसी आज्ञा महाराज!

[जाना, नारान्तक का आना]

नारान्तक—पिता जी प्रणाम ।

रावण—(नरान्तक को गले लगा कर) जीवित रहो पुत्र । लोक में कीर्ति प्राप्त करो । कहो कुशल तो है ?

नारान्तक—हां पिता जी ! सब प्रकार से कुशल है केवल यहां के समाचार का दुख है ।

रावण—हां बेटा ! कालनेमि, कुम्भकर्ण, मेघनाद, अहिरावण आदि हजारों योद्धा मारे जा चुके हैं । और लाखों स्त्रियों के सुहाग उजाड़ जा चुके हैं । अब लंका में कौन योद्धा है केवल एक तुम्हारा ही भरोसा है ।

नारान्तक—तो चिन्ता ही क्या है ? मैं अकेला ही सबको ठिकाने लगा दूंगा और अन्याय का बदला चुका दूंगा ।

रावण—धन्य हो पुत्र ! तुम धन्य हो! निस्सन्देह तुम सच्चे वीर हो ।

नारान्तक—हा पिता जी ! आप सन्देह त्याग दीजिए और प्रातः मेरा युद्ध देखिये । मैं प्रण करके कहता हूं कि कल को पृथ्वी वानर रहित करके दोनों भाइयों को आपके सामने पकड़ लाऊंगा, तब ही आपका पुत्र कहलाऊंगा ।

रावण—क्यों नहीं ! जिस को तुम जैसी सन्तान है उस का दुनिया में कैसे न सम्मान हो । अच्छा अब विश्राम करो और प्रातःकाल यही काम करो । वाह-वाह ! अब जो ठण्डा हुआ :—

सुबह होगी और बजेगा जीत का डंका मेरी;
तीन लोकों में उजागर होगी फिर लंका मेरी ।

[परदा गिरना]

दृश्य दसवां

(युद्ध भूमि)

नारान्तक—ओ कायरो ! अब कहां जा छिपे हो ? आज तो नारान्तक सारा ही झगड़ा मिटायेगा । देखता हूं कि मेरे सामने कौन आयगा ।

अंगद—(आकर) तो क्या ? तू अब भी बचकर चला जायगा ? ओ दुष्ट; रावण को बुला तेरी लाश उठाकर ले जायगा :—

खैर थी जब तक तुझे रावण ने बुलवाया न था ।
जी रहा था जब तलक तू सामने आया न था ।।

नारान्तक—आ तो सामने आ गया; अब हो अपना पराक्रम दिखा। अरे नीच । ऐसी बातें न बना वीरों के नाम को बट्टा न लगा।

हो चुकी है दुष्ट तेरी जिन्दगानी हो चुकी ।
तेरा जीवन हो चुका तेरी जवानी हो चुकी ।।

अंगद—अच्छा अब आगे बढ़ और वीरों की तरह लड़ ।

[युद्ध होना, अंगद का मूर्छित होकर गिर जाना]

हनुमान—(आगे बढ़ कर) बस-बस ओ चांडाल । आपे से बाहर न हो ले अब जीवन से हाथ धो : -

बात तो करता है बढ़ बढ़ कर बहुत अभिमान से ।
जीत कर दिखला जरा सग्राम तू हनुमान से ।।

नारान्तक—(व्यंग से) ओहो ? आप फिर आ गये ? लंका को जलाने वाले और अहिरावण को मौत की नीद सुलाने वाले फिर आ गये ? आइये ? आज तुम्हें उस वीरता का पुरस्कार देता हूं । राम को पाछे देखूगा पहले तुम्हारी ही खबर लेता हूं :—

कायरों को जीत कर बलवान बन बैठा है तू ।
आज देखूगा कि क्या हनुमान बन बैठा है तू ।।

हनुमान—आ ? ओ अधर्मी आ । मैं तेरे ही जैसे पापियों को खोज-२ कर मारता हूं और ऐसे ही दुष्ट राक्षसों को मृत्यु के घाट उतारता हूं :—

आज दिखलाऊंगा तुझ को वीर की क्या चाल है ।
देख यह मुष्टिक निशाचर आज तेरा काल है ।।

नारान्तक—ओ चांडाल ? मुझे यह मुष्टिक क्या दिखाता है; जीवन से रूस कर अपनी ही मौत को बुलाता है :—

इस तरह उड़कर न चल आपे से या बाहर न हो।
देख तेरी राह में सोया हुआ अजगर न हो॥

हनुमान—अजगर के बच्चे ? तु मुझे क्या बतायेगा ? पहले आपे को तो सम्भाल ? देख फूलों की सेज समझ कर अग्नि में पांव न डाल :—

देख ओ नादान अपने प्राण का घातक न बन।
सो रहा है शेर इसको छेड़ मत बालक न बन॥

नारान्तक—शेर और गीदड़ का सारा पता अभी हुआ जाता है। आगे बढ़कर आ पीछे क्यों हटता जाता है ? :—

हाथ करतब के दिखा और छोड़ इस तकरार को।
वार अपना भी चला और झेल मेरे वार को।

[युद्ध होना, हनुमान का मूर्छित हो जाना]

लक्ष्मण—(आगे बढ़कर) बस बस ओ अन्यायी। अब जीवन की आशा छोड़ दे :—

फूलता है किस लिये अभिमान में आता है क्यों ?
भूलकर अपनी असल सिर पर चढ़ा जाता है क्यों॥
तू तो है क्या चीज जब योद्धा महा जाते रहे।
देख ले दुनियां से कैसे सूरमा जाते रहे॥

नारान्तक—जा ओ बच्चे जा। कल तो भाग्य से बच गया था आज तो मेरे सामने न आ। कहीं ऐसा न हो कि मुझे बालघात का पाप लग जाये और संसार मेरे नाम पर कलंक लगाये :—

क्यों बढ़ाता है अभी से कालयम से मेल तू।
भूलकर आया कहां कुछ जिन्दगी से खेल तू॥

लक्ष्मण—ओ दुष्ट। यह बालक ही तेरा नशा उतारेगा याद रख कि मेघनाद की तरह तुझे भी मारेगा।

नारान्तक—अच्छा ? यदि तू आप ही मरना चाहता है तो मैं क्या करूं ? चल तुझे भी नरक की आग में धरूं।

[युद्ध होना, लक्ष्मण का मूर्छित होना]

नारान्तक—(इधर उधर देखकर) बस ! ओ मुरदारो दिखा चुके वीरता ? आओ, आज सभी आकर अपने-अपने पराक्रम दिखाओ। (फिर देखकर) कोई नहीं। सब भाग गये। इन के मरते ही सारे भाग गये। चलो झगड़ा मिटा। अब सामने आने का साहस न करेंगे।

[नारान्तक का जाना, परदा गिरना]

दृश्य ग्यारहवां

(रामादल की छावनी)

सुग्रीव—महाराज ! क्या बताऊं ? आज तो नारान्तक ने अनर्थ कर डाला हमारा सारा पुरुषार्थ ही व्यथ कर डाला।

लक्ष्मण—सचमुच भ्राता जी ? यदि वह कुछ दिन और इसी प्रकार लड़ता जायगा तो हमारे वीरों का साहस बिछड़ता जायगा।

राम—ओंहो ? इतना कठोर है ?

हनुमान—कुछ न पूछिये महाराज ? युद्ध कला में वह इतना प्रवीण है कि उस पर विजय पाना असम्भव सा जान पड़ता है, अन्यायो चारों ओर से सचेत होकर लड़ता है।

अंगद—हां प्रभो ! मेरे ऊपर तो दुष्ट ने ऐसा शस्त्र चलाया कि मुझे बहुत समय तक बेसुध बनाया।

लक्ष्मण—और मेरी छाती पर भी गदा का एक ऐसा भयंकर वार किया कि मुझे मूर्छित कर दिया !

राम—तो फिर अब क्या करना होगा।

हनुमान—क्या बतावें महाराज ! नारान्तक तो कुछ निराला ही वीर है, उससे युद्ध करना बहुत ही टेढ़ी खीर है !

राम—अच्छा तो कल मैं ही उससे युद्ध करूंगा।

जाम्बवन्त—हां महाराज ! उस दुष्ट का जल्दी ही संहार कर दीजिये और वानर सेना की शान्ति का उपाय कीजिये। नहीं तो वह

सब को साहस हीन कर देगा, और सेना को निराशा से भर देगा।

[नारद मुनि का गाते हुए प्रवेश]

नारद— गाना

सब के नारायण रखवारे !
जाके और भरोसो नहीं ताके आप सहारे।
गणिका, व्याध, अजामिल, केवट नीच पतित इत्यारे।
करुणाकर तुम करुणा करके भवसागर ते तारे॥
भक्त धुरू ने याद कियो जब कारज सकल सवारे।
दुखित हृदय प्रहलाद पुकारो पल में संकट टारे॥

राम—(नारद को देखकर और खड़े होकर) आह नारद जी ! नमस्कार आइये ! पधारिये !

नारद—नमस्कार भगवन ! कहिये ! इतनी रात्रि गये तक क्या विचार हो रहा है ?

राम—क्या बताऐं नारद जी ! कई दिन से युद्ध हो रहा है, परन्तु रावण का पुत्र नारान्तक मरने में नहीं आता; न जाने दुष्ट कितना कठोर है।

नारद—हां भगवन ! वह इस प्रकार कदापि न मरेगा ?

राम—क्यों ? क्या कारण है नारद जी ?

नारद—महाराज ! उसे ब्रह्मा जी का वरदान है इसलिये वह केवल एक ही उपाय से मर सकता है !

राम—वह क्या उपाय है नारद जी ?

नारद—सुनिये भगवन ! एक समय रावण के राज्य में बहत्तर कोटि राक्षस उत्पन्न हुए तो उसने अपने गुरू शुक्राचार्य को बुला कर उनके जन्म का शगुन पूछा ? शुक्राचार्य ने कहा कि इस लग्न के बालक मूलों मे उत्पन्न हुए हैं। यदि वे घर में रहेंगे तो अपने-अपने पिताओं का नाश कर देंगे ! यह सुनते ही रावण ने उन सब को समुद्र में डलवा दिया ! परन्तु वे बालक वट-

वृक्ष के सहारे पलने लगे। बड़े होने पर उन सभों ने ब्रह्मा जी का तप किया और ब्रह्मा जी ने प्रसन्न होकर उन्हें बहबाबलपुर में बसा दिया तथा रावण के पुत्र नारान्तक को उन का राजा बना दिया ! ब्रह्मा जी ने यह भी वरदान दिया कि तू ब्रह्मांड में किसी से भी न हार सकेगा, केवल सुग्रीव का पुत्र दधिबल ही तुझे मार सकेगा।

राम—ओहो ! यह भेद है ?

नारद—हां प्रभो ! अब किसी को भेज कर दधिबल को बुलवाइये और इस कठोर राक्षस का विध्वस कराइये ?

राम—परन्तु नारद जी ! दधिबल रहता कहां है ?

नारद—महाराज। वह धौलागिरि पर आप का भजन कर रहा है।

राम—अच्छा वीर हनुमान जी ! आप धोलागिरि पर चले जाइये और दधिबल को लेकर शीघ्र ही आइये।

हनुमान—जैसी आज्ञा प्रभो ! (जाना)

नारद—अच्छा भगवान। अब आज्ञा दीजिये और आप भी विश्राम कीजिये।

राम—अच्छा मुनिराज ! धन्यवाद !

[नारद का गाते हुए जाना, परदा गिरना]

दृश्य बारहवां

(धौलागिरि)

हनुमान—(आकर और चारों ओर देखकर) हैं ! यहां तो कोई भी नहीं। चारों ओर सन्नाटा छा रहा है। दधिबल को कहां ढूंढूं। (आवाज सुन कर) अहा। यह मधुर स्वर कहां से आ रहा है ? प्रतीत होता है कि कोई [illegible] म-नाम गा रहा है। (आगे बढ़ कर) सम्भव है यह दधि [illegible] ही हो ? (ध्यान से गाने का स्वर सुनना)

दधिबल—गाना

प्रभु तुम शोक हरण भय भंजन।
करुणाकर अब करुणा करके काटो जग के बन्धन ॥ प्रभु तुम···

अवध नगर, कौशल के राजा पावन दशरथ-नन्दन ।
जगत सहायक सब सुख दायक दुख भंजन मनरंजन । प्रभु तुम···
मरण-समय सिर पर चढ़ आया ना ढूंढा सुख-साधन ।
'कुशल' सहज ही बीता जाता, सारा निषफल जीवन । प्रभु तुम···

हनुमान—यह ध्वनि तो इसी गुफा से आ रही है, चलूं इसी की ओर चलूं । (आगे बढ़ना)

दधिबल—(गुफा से निकल कर) ये शंकाएं भी कैसी विचित्र होती हैं कि भजन में भी बाधा डाल देती हैं; और आज तो समय के पहले ही व्यापने लगी । (हनुमान को देखकर) कौन है भाई ?

हनुमान—जय श्री राम !

दधिबल—जय श्री राम । कौन है ? अर्द्ध रात्रि के समय यहां क्या काम है ?

हनुमान—भक्त दधिबल । मैं तुम्हारे पिता सुग्रीव का मन्त्री हनुमान हूं ।

दधिबल—(आश्चर्य से) हनुमान ? कहो अंजनीकुमार । कैसे आना हुआ ?

हनुमान—भाई । तुम्हारी तपस्या सफल हुई । प्रभु राम चन्द्र जी ने तुम्हें याद किया है ।

दधिबल—(प्रसन्न होकर) प्रभु ने याद किया है ? सच !

हनुमान—हां भाई ! तुम्हें इसी समय साथ चलना होगा !

दधिबल—अहो भाग्य; प्रभु के दर्शनों के लिये जो तपस्या कर रहा था आज वह पूर्ण हुई । मेरे लिये इस से बढ़कर सुन्दर अवसर और क्या हो सकता है ? चलिये महाराज !

[दोनों का जाना, परदा गिरना]

दृश्य तेरहवां

(रामादल की छावनी)

विभीषण—वह देखिये महाराज! हनुमान दधिबल सहित आ रहे हैं

हनुमान—(आकर) महाराज नमस्कार !

दधिबल—(चरणों में गिर कर) जय हो ! कृपासिन्ध भगवान आप की जय हो !

राम—(दधिबल को छाती से लगाकर) चिरंजीव रहो पुत्र ! कहो कुशल से तो हो !

दधिबल—महाराज ! जिनको आपके चरणों का आधार है उनको कोई बाधा में कैसे डाल सकता है ! (सुग्रीव के चरणों में गिर कर) पिता जी प्रणाम !

सुग्रीव—जीवित रहो पुत्र ! कहो अच्छी तरह तो हो ?

दधिबल—हां पिता जी ! प्रभु का अनुग्रह और आप का आशीर्वाद है !

सुग्रीव—प्यारे पुत्र ! तुम जानते ही होगे कि आजकल नारान्तक से युद्ध चल रहा है और वह ब्रह्मा जी के वरदान के कारण तुम्हारे द्वारा ही मारा जा सकता है !

दधिबल—हाँ पिता जी ! जब हम गुरु के यहां शिक्षा पा रहे थे तब ब्रह्मा जी ने उसे यही वरदान दिया था ।

सुग्रीव—अच्छा तो प्रातःकाल तुम उससे लड़ने चले जाओ और अधर्मी का वध करके प्रभु की चिन्ता मिटाओ ।

दधिबल—ऐसा ही होगा पिता जी ! प्रभु के लिये मैं अपने प्राण भी दे सकता हूं ।

[परदा गिरना]

दृश्य चौदहवां

(युद्ध भूमि)

नारान्तक—(गरज कर) आओ ! हे सिंह के शिकारों अपनी-अपनी गुफाओं से निकल कर आओ । जो कल के युद्ध से बच गये थे वे आज परलोक की हवा खाओ ! :—

जी चुके हो बहुत अब प्राणों की ममता छोड दो ।
नाश का दिन आ गया जीने की आशा छोड़ दो ।।

दधिबल—(प्राकर) ओहो ! मित्र नारान्तक ! कहो आनन्द से तो हो ?

नारान्तक—कौन दधिबल । कहो ? तुम यहां कहां ?

दधिबल—मैंने सुना है कि रावण का पक्ष लेकर तुम भी भगवान से बैर करने चले हो । हे भाई ! भगवान के शत्रु का कहो कुशल नहीं :—

राम की महिमा को तुम ने भाई जाना ही नहीं ।
उनके शत्रु का कहीं कोई ठिकाना ही नहीं ।।

नारान्तक—दधिबल ! हम शत्रु से प्रीत नहीं किया करते कुल के बैरी को कभी मान नहीं दिया करते । यह रीति तुम्हीं ने निकाली है कि अपने चचा बाली के शत्रु को आबरू बेच डाली है :—

कुल कलंकी आज तक ऐसा कोई देखा नहीं ।
तुम ही ऐसे हो जिन्हें कुल मान की परवा नहीं ।।

दधिबल—अरे मूर्ख ! तेरी नीति कुल का मान नहीं कुल का नाश करने वाली नीति है । कहीं अधर्म की जय होते हुए भी देखी है ?

पाप के पथ पर कहीं विश्राम की छाया नहीं ।
धर्म के बैरी की तीनों लोक में रक्षा नहीं ।।
राख पर लंका की ; आशाओं को रोने से बचा।
जो बचा सकता है कुल का नाश होने से बचा ।।

नारान्तक—चल ! चल ! ओ डरपोक वानर यहां से टल । तू मुझे सचाई का मार्ग दिखाता है; या अपनी ही तरह कुलघातक और विश्वासघातो बनाना चाहता है :—

जिसने अपने बाप का अच्छा बुरा देखा नहीं ।
बाप का शत्रु है ऐसा पुत्र वह बेटा नहीं ।।

दधिबल—नारान्तक । गुरु भाई होने के नाते मैं तुझे एक बार फिर समझाता हूं कि तू राम से बैर न बढ़ा । अपने और पिता के वैभव को धूल मे न मिला :—

कह रहा हूं फिर तुझे, अभिमान में अन्धा न बन।
ओ अधर्मी अपने कुल के खून का प्यासा न बन॥

नारान्तक—बस-बस ओ दुष्ट ! मैं समझ गया कि तू मेरी नरमी से उलटी शिक्षा लेगा और मेरे हाथों को अवश्य कष्ट देगा। अच्छा, ले सम्भल ! :—

इस परम शिक्षा का तेरी फल चखाता हूं तुझे।
देख अब भूमि की शैया पर सुलाता हूं तुझे !

दधिबल—अच्छा ! यदि तेरी इच्छा है तो आ ! शिक्षा के द्वारा नहीं मानता तो संग्राम के द्वारा अपने कुकर्मों का फल पा !

कर्म का हीना भी है बुद्धि का हीना ही नहीं।
चल अधर्मी अब तुझे दुनिया में जीना ही नहीं॥

[दोनों में युद्ध होना; नारान्तक का मारा जाना]

राम—धन्य हो भक्त दधिबल ! तुम धन्य हो ! तुमने सचमुच बड़ी वीरता का काम किया और मेरी चिन्ता का हर लिया। अब तुम्हें जो अच्छा लगे कोई वर मांग लो !

दधिबल—हे नाथ ! संसार के सकल पदार्थ नाशवान हैं; इनके मोह में फंसने वाले जीव महान अज्ञान हैं; प्रभो ! मुझे इन के बन्धन से छुड़ा दीजिये और अपनी निर्मल भक्ति दीजिये।

राम—एवमस्तु !

[परदा गिरना]

दृश्य पन्द्रहवां

(अशोक वाटिका)

सीता— गाना

विरहा विरहन का सोने न दे
स्वामी बिना मोहे सृष्टि अंधेरी; दुखिया को दुःखों ने घेरी;
प्रेमअनल मोहे रोने न दे—विरहा·····
रावण पापी दुष्ट कुकर्मी-दारुण दुख देता है अधर्मी।
प्राण तजूं तो खोने न दे। विरहा·····

आह ! प्राण नाथ ! क्या अभी तक मेरे पापों का अन्त नहीं आया ? क्या आज तक मैंने अपने कुकर्मों का फल नहीं पाया? आओ ! हे संकट मोचन ! अब तो मेरी सहायता को आओ! अब तो दासी को इस कठोर बन्धन से छुड़ाओ :—

जी रही हूं नाथ मैं केवल सहारे आप के।
कब तलक दर्शन मिलेंगे प्राण प्यारे आपके ?

[रावण का प्रवश]

रावण— कहो सीते ! क्या विचार है ?

सीता—(मुंह फेर कर) दूर हो पापी ! जानकी तेरी सूरत से बेजार है।

रावण—ओह ! इतनी कठोर ! यौवन को देखो इतनी कठोर ! सीते मैं तेरे सामने पल्ला पसारता हूं ! तुझ से प्रेम की भीख मांगता हूं ! दया कर ! कुछ तो दया कर:—

द्वार पर आये भिखारी को महारानी न फेर।
निर्दयी बनकर मेरी आशाओं पर पानी न फेर ॥

सीता—रावण ! तू मुझे चैन क्यों नहीं लेने देता है ? ओ दुष्ट ! इतने पापों का बोझ किस लिए सिर पर लेता है ?:—

ज्ञान का भंडार होकर बेसमझ रावण न बन।
देख अपने आप अपने नाश का कारण न बन ॥

रावण—बावली ! मैं तुझे इतनी बार समझा चुका, ऊंच-नीच के सारे मार्ग दिखा चुका, परन्तु तेरी समझ में कुछ भी न आया तूने मेरे वैभव को अब तक भी धूल ही बताया मैं फिर कहता हूं :—

जानकी रावण के दुर्लभ प्यार पर ठोकर न मार !
तीन लोकों के अतुल भण्डार पर ठोकर न मार ॥

सीता—अरे दुष्ट ! इतना नीच काम न कर ! वासना को प्रेम कह कर सच्चे प्रेम को बदनाम न कर :—

प्यार क्या जाने, अधर्मी काम में अन्धा है तू।
वासनाओं में फंसा है धर्म को भूला है तू ॥

रावण—(हंसकर) धर्म ! धर्म किस वस्तु का नाम है ? केवल पाखंडियों का रचा हुआ एक जाल है :—

रख लिया है मूर्खों ने धर्म इक धोखे का नाम।
धर्म कहती है जिसे, है मन के बहलावे का नाम।

सीता—ठीक है ! तेरे जैसा पापी धर्म-अधर्म को क्या पहचानता है ? हीरे का मूल्य तो कोई जौहरी ही जानता है :—

नीच पामर के लिए सुरताल पोखर एक है।
नासमझ के वास्ते लाल और पत्थर एक है।।

रावण—बस ! अो हठ की हठीला। अब और अधिक न बढ़। मूर्खों की तरह सिर पर न चढ़ :—

मान ले कहना मेरा अब मत बढ़ा तकरार देख।
अन्यथा गरदन पै तेरी होगी यह तलवार देख।।

सीता—मूर्ख ! तलवार का भय उनको होता है, जो मरने से डरती हैं। पतिव्रता स्त्रियां तो सदा अपने प्राणों से खेला करती हैं।

चाहे जो अन्याय कर धुन मेरी जा सकती नहीं।
शक्तियां संसार की पथ से हटा सकती नहीं।।

रावण—क्या करूं ! मजबूर हूं। अभी अवधि में कुछ दिन और बाकी हैं। नहीं तो सारी हठ देख लेतां। जितना तू टेढ़ी चल रही है उतनी ही सीधी बना देता। [रावण का जाना।

सीता—(स्वयं) देख रहे हो स्वामी ! यह दुष्ट किस तरह रहा है; कटु वचन कह-कह कर मेरा मन दुखा रहा है :—

पाप हो जब इस तरह फिर किस तरह सन्तोष हो ?
सुन रहे हो आप, फिर किस वास्ते खामोश हो ?

गाना—

कौन सुने अब विपत कहानी ?
स्वामी मो से रूठ गये हैं—अब दिन मोरे कठिन भये हैं।
दर्शन मो को होवत नाहीं-ना जानूं क्या ठानी।।
कौन सुने·····

जो मोहे बस मरना होता—काहे को दुख भरना होता।
जब विरहा काटे ना कटता-खो देती जिन्दगानी।।
[परदा गिरता है] कौन सुने·····

दृश्य सोलहवां

(रावण दरबार)

रावण—वाह रे बली नारान्तक ! कल तूने कैसा पराक्रम दिखाया कि लक्ष्मण, हनुमान, अगद आदि सभी को मूर्छित बनाया। क्यों नहीं आखिर तो रावण का पुत्र है :—

है मुझे निश्चय करेगा सिद्ध मेरा काम तू।
विश्व में फैलायगा रावण का इक दिन नाम तू।।

मन्त्री यथार्थ है महाराज ! नारान्तक से ऐसी ही आशा है।

[दूत का प्रवेश]

दूत—(घबराये हुए) महाराज !

रावण—क्यों ? क्या समाचार है ?

दूत—(डरते-डरते) महाराज ! नारान्तक भी परलोक सिधार गया !

रावण—परलोक सिधार गया ! झूठ बकता है।

दूत—नहीं पृथ्वी नाथ ! सत्य कह रहा हूं।

रावण—तो आखिर उसे किसने मारा ?

दूत—सुग्रीव के पुत्र दधिबल ने।

रावण—अरे मूर्ख दधिबल वहां कहाँ था ?

दूत—महाराज। उसे हनुमान जाकर धौलागिरि से ले आया और उसने उसे प्रातःकाल ही सुरपुर पहुंचाया।

रावण—हाँ, अब विश्वास हो गया कि निस्सन्देह मेरा भाग्य सो गया ? अफसोस :—

हो चुका था खात्मा इक इक दिलावर का मेरे।
बुझ गया है आखरी दीपक भी अब घर का मेरे।।

मन्त्री—शान्त। महाराज, शान्त।

रावण—चुप हो। (आवेश में) सावधान हो जा। हे शत्रुओं का नाश करने वाली चन्द्रहास। सावधान हो जा। फड़क जाओ। हे कैलाश को हिलाने वाली भुजाओ। फड़क जाओ, बस अब नहीं रहा जाता शत्रुओं की विजय का समाचार बार-बार नहीं सुना जाता :—

क्रोध ने अन्धा किया है आज मेरे ज्ञान को।
अब नहीं बैठूंगा मैं आराम से इक आन को ।।
जान की बाजी लगाकर अब समर में जाऊंगा।
आज शत्रु का जगत से नाश करके आऊंगा।।

[जाना, परदा गिरता है]

दृश्य सत्रहवां

[रावण यज्ञ कर रहा है, वानर भ्रष्ट करने की चेष्टा कर रहे हैं]

(रावण की यज्ञ-शाला)

एक वानर—यह देखो। कैसा भक्त बना बैठा है ? मानो इसके समान संसार में कोई दूसरा तपस्वी ही नहीं।

दूसरा—सारे कुल का नाश कराके अब दुष्ट को परमार्थ की सूझी है।

अंगद—(रावण से) क्यों रे निर्लज्ज। लाखों पाप करके अब बगुला भक्त बन कर बैठा है। क्या अपने कुकर्मों का प्रायश्चित करना चाहता है ? (अंगद का लात मारना)

हनुमान—अरे ! यह इस प्रकार नहीं मानेगा। चलो मन्दोदरी को पकड़ कर लाओ और इसके सामने उसके मस्तक पर कालिमा का टीका लगाओ।

अंगद—हां-हां, ठीक है। चलो चलो।

[मन्दोदरी को घसीट कर लाना]

स्त्रियां—बचाओ ! हे प्राण नाथ ! बचाओ।

रावण—(क्रोध में खड़े होकर) अरे दुष्टो, इतना अत्याचार मेरे सामने मेरी पत्नी के साथ यह दुर्व्यवहार ?

तुम समझते हो कि यह अपमान भी सह जाऊंगा।
चीर कर छाती सभी का खून पी रह जाऊंगा ।।

[रावण का वानरों के पीछे दौड़ना; अंगद, हनुमान आदि का यज्ञ-विध्वंस करना और भाग जाना]

रावण—कहां जा सकते हो दुष्टों ? मेरे हाथ से बचकर कहां जा सकते हो ? यदि पाताल में भी जाओगे तो भी बचने नहीं पाओगे! :—

खींच लाऊंगा तुम्हें भूमि का सीना फाड़ कर।
मार डालूंगा मसल कर सिर, कलेजा फाड़ कर।।

[यज्ञ को विध्वंस हुआ देखकर और निराश होकर]

आ ! यह कैसा अपशकुन ? नीच मेरा अन्तिम यज्ञ भी बिगाड़ गये। अब क्या होगा ? विजय की आशा बहुत कम रह गई:—

आज आशाओं के सारे पुष्प ही कुम्हला गये।
सब दिशाओं में निराशाओं के घन मडरा गये।।

(बाजों का शोर सुनकर) होने दो ! इन अपशकुनों को भी होने दो ! वह सुनो ! शत्रुओं के बाजे बज रहे हैं। बजाओ तुम भी रण-भेरी बजाओ ! मेरी चतुरंगिनी सेना का सजाओ परवाह ही क्या है ? एक-एक को देख लूंगा :—

बढ़ता चलूंगा जीत का झंडा लिये हुए।
गाता चलूंगा मौत का फंदा लिये हुए।।

[जाना, परदा गिरता है]

दृश्य अठारहवां

(युद्ध भूमि)

रावण—उठ जाग, हे रणचण्डी ! अपना विनाशकारी खप्पर लिये हुए उठ जाग ! खोल दे ! ओ यमराज ! आज नरक का द्वार खोल दे। भैरव ! तू सावधान हो जा ! पिशाचिनी ! तू रक्त चाटने वाला मुंह खोल ! कालिका ! तू मुण्डों की माला बना:—

सिर पै सिर कट-कट गिरेंगे लाश होगी लाश पर।
रक्त के नाले बहेंगे देखना आकाश पर।।

सेनापति—(सामने की ओर संकेत करके) वह देखिये महाराज ! जटा-जूट बांधे और हाथों में धनुष-बाण उठाये राम इसी ओर आ रहा है, मानो कोई भयंकर युद्ध विजय करने जा रहा है।

रावण—हा ! मैं भी इसी को खोज रहा था (राम की ओर) आ ! ओ

तपस्वी ! आ, आज मैं तेरे खून से सारे सम्बन्धियों की मौत का बदला लूंगा, तूने जितने अन्याय किये हैं उन सब का पूरा-पूरा दण्ड दूंगा। आगे बढ़ और देख :—

किस तरह होती है जीवन से निराशा देख ले।
आज अपनी दुष्टता का भी तमाशा देख ले॥
भागकर छिपने से तेरी जान बच सकती नहीं।
आ बचाये जो तुझ ऐसी कोई शक्ति नहीं॥

राम—(आगे बढ़कर) रावण! इतनी भूल न कर; यदि किसी से भी नहीं तो भाग्य के चक्र से तो डर :—

नाश होने में तू अपने को बचा सकता नहीं।
जान ले रावण! कि औरों को मिटा सकता नहीं॥

रावण—मिटा सकता नहीं ? भूल जा, हे राम ! उस हवा को भूल जा ! आज मैं नाश का भी विनाश कर दूंगा, सारी समर-भूमि को लाशों से भर दूंगा :—

तोड़ दूंगा चक्र नभ का, भाग्य का झुठलाऊंगा।
चाहे कुछ भी हो विजय करके तुझे दिखलाऊंगा॥

राम—विजय ? क्या पापों से विजय होती है ? क्या अन्याय और दुराचारों से विजय होती है ?

देख रावण ध्यान से और खोल आखें न्याय की।
न्याय की जय और पराजय है सदा अन्याय की॥

रावण—अरे अज्ञान ! तू मेरी शक्ति को नहीं पहचानता है, क्या मुझे भी साधारण मनुष्य जानता है :—

देव; दानवदल; दनुज—दातार कहते है मुझे।
यम, वरुण, अग्नि, पवन—सरदार कहते हैं मुझे॥
विश्व-ज्ञानी, ज्ञान का भण्डार कहते हैं मुझे।
लोक के गुणवान गुण-अवतार कहते हैं मुझे॥
बज रहा है मेरा डका स्वर्ग और पाताल में।
गूंजता है नाम मेरा शङ्ख और घड़ियाल में॥

राम—हां ! यह मैं सब कुछ जानता हूं, और तेरी बड़ाई को महान मानता हूं; परन्तु देख रावण, अहंकार सारे वैभव को धूल में मिला देता है, दुष्कर्म और पापाचार शक्ति को जड़ों पर कुल्हाड़ा चला देता है। क्या तू नहीं जानता कि :—

वीर, पण्डित, तेजधारी, राव और राजा गये।
काल के पापी उदर में सैकड़ों योद्धा गये॥
जग-विजेता, घोर और बलवान कोई भी नहीं।
कर्मयोगी, सन्त और गुणवान कोई भी नहीं॥

रावण—तो क्या तू मुझे ज्ञान सिखाता है ? पण्डितों जैसी बातें बना कर अपने प्राण बचाना चाहता है ? अरे मूर्ख ! यह तो देख कि मैंने देवताओं और दिग्पालों की मर्यादा बिगाड़ दी है, सारे विश्व को विजय करके आकाश पर ध्वजा गाड़ दी है बड़े-बड़े महिपाल मेरी आज्ञा पालते हैं, स्वर्ग के देवता मेरी सेवा करके अपना पेट पालते हैं :—

कुबेर और दिक्पाल, दानव बिचारे।
महा तुच्छ सेवक हैं लंका के सारे॥
दिखाते हैं प्रकाश चाँद और तारे।
पवन साफ करता है कूचे हमारे॥
खड़ा रोज यम मेरे पहरे पै होता।
वरुण नालियों को हमारी है धोता॥

राम—ठीक है ! परन्तु रावण अब वे दिन जा चुके हैं, तेरे पाप कर्म अब तेरे सामने आ चुके हैं और विनाश के देवता तेरी गरदन दबा चुके हैं :—

मिट गया वैभव का जादू अब तो बस अंधेर है।
जान ले मिटने में तेरे बस पलों का देर है॥

रावण—क्या बोलता है ? अरे तपस्वी ! शब्दों में विष क्यों घोलता है ? देख लेना ! तू आज भी मेरी वीरता का चमत्कार देख लेना :—

युद्ध में तलवार के जौहर दिखाता जाऊंगा।
देखना संग्राम में बिजली गिराता जाऊंगा॥

आग की भट्टी बनूंगा और जलाता जाऊंगा ।
पीस कर सुरमा करूंगा और उड़ाता जाऊंगा।।
हो चुकी बस आज तक ही जय तुम्हारी हो चुकी।
याद रखो अब विजय चेरी हमारी हो चुकी ।।

राम—अच्छा ! यदि तुझे अपनी विजय का इतना ही विश्वास है तो आगे बढ़ और देख कि विजय लक्ष्मी किस के पास है ।

रावण—हां-हां ! आगे आ ! और अपना सारा पराक्रम दिखा ।

[युद्ध होना और वानर सेना में भगदड़ पड़ना]

आकाशवाणी—जल्दी कीजिये ! महाराज ! इस पापी का वध जल्दी कीजिये । वानर भयभीत होकर भागे जा रहे हैं और स्वर्ग के देवता बहुत घबरा रहे हैं ।

विभीषण—(घबराये हुये) महाराज ! अनर्थ हो गया ! जिधर देखो उधर रावण ही लड़ते हुए नजर आ रहे हैं।

राम—यह सब राक्षसी माया है विभीषण । लो मैं इसका नाश किये देता हूं ! (राम का माया-भेदी वाण छोड़ना)

विभीषण—बस महाराज ! अब इसे अधिक खेल न खिलाइये जल्दी ही सुरपुर पहुंचाइये !

राम—क्या करूं भाई ! इस दुष्ट के जितने सिर काटे जाते हैं उतने ही और उत्पन्न हो जाते हैं ।

विभीषण—हां महाराज ! इसने कई बार अपने सीस काट-काट कर शिवजी पर चढ़ाए हैं, और आज एक-एक के बदले अनेक पाये हैं ।

राम—तो फिर क्या करना चाहिये ?

विभीषण—सुनिये प्रभो !

इस तरह यह मर नहीं सकता किसी हथियार से ।
तीर से, बरछी से, भाला, ढाल, और तलवार से ।।
नाभि में इसकी है अमृत-कुण्ड जाना चाहिये ।
यह मरेगा तब उसे पहिले सुखाना चाहिये ।।

राम—ओहो ! यह भेद है ! अच्छा ! अब अग्निवाण द्वारा इस कुंड

को ही सुखाता हूं और वानरों तथा देवताओं का सन्ताप मिटाता हूं।

[राम द्वारा अग्निबाण मारना, रावण का गिरना, देवताओं का विमानों पर चढ़कर फूल बरसाना और स्तुति गाना]

सब—जय ! सियावर रामचन्द्र की जय !

राम—अच्छा हनुमान जी ! अब आप जाकर जानकी को विजय की सूचना पहुंचाइये और अपने साथ ले आइये !

हनुमान—जैसी आज्ञा प्रभो ! (जाना)

राम—(लक्ष्मण से) भाई ! कहने को तो रावण हमारा शत्रु है परन्तु राजनीति में परम गुरु है। इसलिये बैरभाव को भूल कर उसके पास जाओ और उसके अनुभव से लाभ उठाओ।

लक्ष्मण—जैसी आज्ञा भगवन ! (रावण के पास जाकर) लंकेश ! हमारी-तुम्हारी जो शत्रुता थी अब सारी समाप्त हो गई। इस समय उन पिछली बातों का ध्यान न लाओ और कृपा करके हमें अपना अनुभव बताओ। (रावण चुप रहता है) ओहो! बोलता भी नहीं। अभी तक वही अहंकार भरा हुआ है। (राम के पास जाकर) महाराज ! वह तो आंखें भी नहीं खोलता, मुंह से भी नहीं बोलता। मैंने उसके सिर पर खड़ा होकर कई बार पुकारा परन्तु उसने फूटे मुंह से एक शब्द भी न उचारा।

राम—वाह ! नीति का उल्लंघन करके नीति का उपदेश कैसे पा सकते हो ? गुरु का निरादर करके ज्ञान लाभ कैसे उठा सकते हो ? जाओ और चरणों की ओर खड़े होकर पुकारो।

लक्ष्मण—बहुत अच्छा प्रभो। (रावण के चरणों की ओर खड़ा होकर) महात्मन, मेरी प्राथना स्वीकार कीजिये और हमें कोई उत्तम शिक्षा दीजिये।

रावण—वीर लक्ष्मण ! तुम स्वयं अपने ज्ञान से जगत का कल्याण करते हो किन्तु मेरा अनुभव पूछ कर मेरा सम्मान करते हो। अच्छा तो सुनो :—

गाना (तर्ज—लहद में रोशनी···)

सिखाना ज्ञान तुमको दीप सूरज को दिखाना है।
तुम्हारी ज्ञान शक्ति को तो वेदों ने बखाना है॥
न सुनना सीख अपनों की न देना ध्यान नीति पर।
यह कुल-सम्मान खोना है, धरम की जड़ कटाना है॥
समझना बल अधिक अपना सदा अभिमान में रहना।
यह अपने आप पैरों पर कुल्हाड़ी का चलाना है॥
बुरा है छोड़ देना काम सारा आज का कल पर।
भंवर में नाश के खुद अपनी नौका को गिराना है॥
न लाना ध्यान में शत्रु को अपने जानकर छोटा।
यह अपने रास्ते में आप ही कांटे बिछाना है॥
कुशल जग-सम्पदा को मान में अपनी समझ लेना।
अधर्मी बन के मानवता की मर्यादा मिटाना है॥

लक्ष्मण—धन्य! ज्ञान के पुंज रावण! तुम्हें धन्य!

रावण—अच्छा लक्ष्मण! अब बोला नहीं जाता, प्राण पखेरू उड़ना चाहते हैं। अच्छा विदा।····· (मरना)

राम—आहा! यह आसार संसार भी क्या है कि इतना महान पराक्रमी भी भूमि पर सो रहा है:—

क्या भरोसा तुच्छ जीवन का, है जल का बुलबुला।
सार है संसार का आया यहां बस चल दिया॥

विभीषण—(रोकर) हाय भाई! यह तुमने अपने अभिमान का फल पाया। देख लो! ऐस विजेता और महारथी का भी अन्त आया।

राम—विभीषण जी? सन्तोष से काम लो। रावण का अन्तिम दाह सस्कार करो।

विभीषण—जैसी आज्ञा प्रभो?

सीता—(आकर और राम के चरणों में गिरकर) स्वामी? प्राणनाथ।

राम—(उठाकर और गले लगाकर) प्राण बल्लभे? सीते?

[दृश्य परिवर्तन पर राम के राज-तिलक का दृश्य। टेबल पर ड्राप]